अहिंसक क्रान्ति का पाक्षिक मुख-पत्र

सर्वोदय जगत

वर्ष-42, अंक-15, 16-31 मार्च, 2019

सर्वोदय आंदोलन के 71 साल

सर्व सेवा संघ (अ. भा. सर्वोदय मंडल) का 87वां अधिवेशन

12-13 मार्च 2019 : रायपुर (छत्तीसगढ़)

सर्व सेवा संघ
(अखिल भारत सर्वोदय मंडल)
द्वारा प्रकाशित

अहिंसक क्रान्ति का पाक्षिक मुख-पत्र
सर्वोदय जगत
सत्य, अहिंसा एवं सर्वोदय-सम्पूर्ण क्रांति का संदेश वाहक

वर्ष : 42, अंक : 15, 16-31 मार्च, 2019

संपादक
अशोक मोती
फोन : 0542-2440223

संपादक मंडल
डॉ. रामजी सिंह भवानी शंकर 'कुसुम'

संपादकीय कार्यालय
सर्व सेवा संघ, साधना केन्द्र
राजघाट, वाराणसी-221001 (उ.प्र.)
फोन : 0542-2440-385/223
ईमेल : sarvodayajagat@gmail.com
Website : sssprakashan.com

शुल्क

मूल्य	:	05 रुपये
वार्षिक	:	100 रुपये
आजीवन	:	1000 रुपये

खाता संख्या : 383502010004310
IFSC No. UBIN-0538353
Union Bank of India
Rajghat, Varanasi

इस अंक में...

1. जंगल छोड़ब नाहिं... 2
2. भावी भारत की मेरी कल्पना... 3
3. धर्मों का रूपांतर शिक्षा में... 4
4. आज की मूलभूत समस्या सांस्कृतिक... 5
5. मजहबों की सच्चाई... 6
6. गुजरात के भावनगर में लाइमस्टोन... 7
7. ग्रामसभा की बात... 9
8. समाजसेवी पत्रकार गणेशशंकर... 10
9. बापू का अध्यात्म... 13
10. उपन्यास - 'बा'... 17
11. गतिविधियां एवं समाचार... 19
12. कविताएं... 20

संपादकीय

जंगल छोड़ब नाहिं

माननीय सर्वोच्च न्यायालय के एक आदेश से आदिवासियों में हड़कंप मच गया है। सरकार की अकर्मण्यता और उसके इन आदिवासियों के साथ खड़ा न होने के कारण न्यायालय का यह आदेश आया है, जिससे लाखों आदिवासियों पर अपनी जड़ से अलग होने का खतरा पैदा हो गया है।

झारखंड से लेकर आंध्र प्रदेश तक पिछले कुछ वर्षों में आदिवासियों के साथ जैसा व्यवहार सरकारें करती रही हैं, आदिवासियों को यह एहसास होने लगा है कि उसके ऐतिहासिक व सांस्कृतिक पक्ष को नजरअंदाज करके उनका अस्तित्व ही मिटाने की कोशिश की जा रही है।

दरअसल नवउदारवादी पूंजीवादी व्यवस्था की पोषक सरकार आदिवासियों की स्वतंत्रता के विरोध में खड़ी है और उसकी नजरें इनके श्रम-शोषण तथा प्राकृतिक संपदाओं, जिसपर उनका जीवन आधारित है, के दोहन पर टिकी है। इन्हें इस बात से कुछ लेना-देना नहीं है कि लोकजीवन और उनकी संस्कृति जल, जंगल, जमीन, खनिज के इर्द-गिर्द ही विकसित हुई है। प्रशासन, कॉरपोरेट तथा विधायिका द्वारा मिलकर जो साजिश हो रही है, उससे लगता है कि लोकतंत्र की निष्फलता की एक नई कहानी ही बनेगी। सदियों से जंगल में रह रहे आदिवासियों से न्यायालय और सरकार द्वारा जमीन के पर्चे और कागजात की अपेक्षा करना उनके जीवनशैली से पूर्णतः अपरिचित, अनभिज्ञ होने जैसा ही है। उनके कानून तो इस देश में बने कानूनों से बहुत पहले से है और अब उनकी सुरक्षा की गारंटी हमारे देश के संविधान में भी है।

इंडिया स्पेंड संस्था के एक खुलासे के अनुसार छत्तीसगढ़, ओडिशा, उत्तर प्रदेश, महाराष्ट्र, आंध्र प्रदेश, हिमाचल, तेलंगाना और कर्नाटक के 1734 वर्ग किलोमीटर तक में फैले करीब 10 लाख आदिवासी-वनवासी प्रभावित हुए हैं। 42 लाख भूमि अधिकार के दावे दायर हुए, जिनमें मात्र 19 लाख शिकायतों का ही निस्तार हुआ।

नवउदारवादी अर्थव्यवस्था ने कॉरपोरेट में जमीन की भूख बढ़ा दी है। 1894 में बने भूमि अधिग्रहण कानून का सहारा लेकर, आदिवासियों के मुखर विरोध के बावजूद, इन प्रतिरोधों को कॉरपोरेट और सरकार ने मिलकर बलपूर्वक कुचलने की कोशिश की। परिणाम स्वरूप यूपीए सरकार 2013 में एक ऐक्ट लेकर आयी, जिसमें सार्वजनिक उद्देश्य के लिए जमीन अधिग्रहण के साथ ही पुनर्वास जैसे प्रावधान जोड़े गये तथा अधिग्रहण में 'ग्रामसभा' की सहमति को अनिवार्य बनाया गया। यह अध्यादेश 5 अप्रैल को समाप्त हो रहा था, इसलिए मोदी सरकार ने 4 अप्रैल 2015 को इन प्रावधानों में 2013 के भूमि अधिग्रहण अधिनियम में बदलाव के लिए एक अध्यादेश पारित किया, जिसमें उपलब्ध प्रावधानों को आर्थिक फायदों के प्रलोभन में बदल दिया गया। क्षेत्रीय विकास के नाम पर जो मॉडल सामने आया है, वह स्थानीय संसाधनों को निगलने वाला साबित हुआ है। यहां तक कि ग्रामसभा, जो आदिवासियों की जीवनशैली और उनकी स्वायत्तता को अक्षुण्ण रखने के लिए संविधान प्रदत्त शक्ति है, उसे राजसत्ता व कॉरपोरेट ने मिलकर नजरअंदाज किया और न केवल कानून का तोड़-मरोड़कर अपने अनुकूल किया बल्कि बल प्रयोग भी किया।

1927 का वन अधिकार कानून तो औपनिवेशिक लूट का कानून था ही। मोदी सरकार अब इसमें संशोधन कर उसे और बर्बर बना रही है। वन अधिकारियों को ग्रामसभा के फैसले के विरुद्ध 'वीटो' लगाने की भी बात हो रही है। अडानी को 1.70 लाख हेक्टेयर वनक्षेत्र पर अधिकार देने तथा लाखों जंगल में बसे आदिवासियों को उनके घरों से हटाने के सुप्रीम कोर्ट के आदेश के साथ जोड़कर यदि देखें तो पूंजीपतियों के मुनाफे के लिए औपनिवेशिक सोच में पलने वाली राजसत्ता का इरादा अकल्पनीय खतरनाक है। इसके विरुद्ध राज्य सरकार भी मुकदमा नहीं कर सकेगी।

इस बीच वन में रहने वाले किसी भी व्यक्ति को अधिकारियों द्वारा बेदखल करने तथा आदिवासी भूमि के कथित गैर-कानूनी अधिग्रहण न करने संबंधी अपील पर सर्वोच्च न्यायालय द्वारा शीघ्र संज्ञान लिये जाने की उम्मीद है। संयुक्त राष्ट्र की मानवाधिकार प्रमुख विशेल वाचले ने भारत को अल्पसंख्यकों, दलित और आदिवासियों पर बढ़े उत्पीड़न तथा भारत में जो अभिव्यक्ति की आजादी की परंपरा को धक्का लगा है, उसके प्रति आगाह करते हुए स्पष्ट किया है कि बांटने वाली नीतियों से आर्थिक वृद्धि को भी झटका लग सकता है।

सर्वोच्च न्यायालय का आदेश जो भी आये, इस बीच सबसे पहले यह जरूरी है कि हम खेती और जंगल की जमीन को विकास के नाम पर कॉरपोरेट को दिये जाने वाले हस्तांतरण पर रोक लगाने के लिए एक सशक्त जन-आंदोलन खड़ा करें, जिसकी दृष्टि वैकल्पिक विकास की संरचना पर हो। हमें यह स्मरण रखना चाहिए कि गांधी-विनोबा और जेपी ने बड़े कल-कारखानों, छोटे उद्योग-धंधे और नगर के केन्द्रित विकास के बजाय गांव को केन्द्रबिन्दु बनाकर विकेन्द्रित विकास का ढांचा तैयार करने की बात कही है।

आदिवासी ने दृढ़-प्रतिज्ञ होकर 'जंगल छोड़ब नाहिं' का नारा बुलंद कर दिया है। जड़ कभी मिट्टी छोड़ेगी भी नहीं। **–अशोक मोती**

भावी भारत की मेरी कल्पना

❑ गांधी

भारत के क्षितिज पर स्वतंत्रता का सूर्य उगने वाला था, तब फिर एक बार बापू ने 5 अक्टूबर, 1945 को नेहरूजी के नाम लिखे पत्र में समाज-रचना की अपनी रूपरेखा के जो आधार-बिन्दु रखे थे, वह अब भी हमें वैकल्पिक व्यवस्था की दिशा में बताते हैं। –सं.

मैंने पहले क्या कहा था, उसे सिद्ध करना नहीं है, आज मैं कहता हूं, वह जानना आवश्यक है। मैं यह मानता हूं कि अगर हिन्दुस्तान को सच्ची आजादी पानी है और हिन्दुस्तान के मार्फत दुनिया को भी, तब आज नहीं तो कल देहातों में ही रहना होगा, झोपड़ियों में, महलों में नहीं। कई करोड़ आदमी शहरों में और महलों में सुख से और शांति से कभी रह नहीं सकते, न एक दूसरे का खून करके—मायने हिंसा से, न झूठ से—यानी असत्य से। सिवाय इस जोड़ी के (यानी सत्य और अहिंसा) मनुष्य जाति का नाश ही है। इसमें मुझे जरा-सा भी शक नहीं है। उस सत्य और अहिंसा का दर्शन केवल देहातों की सादगी में ही कर सकते हैं। वह सादगी चर्खा में और चर्खे में जो चीज भरी है, उसी पर निर्भर है। मुझे कोई डर नहीं है कि दुनिया उल्टी ओर ही जा रही दिखती है। यों तो पतंगा जब अपने नाश की ओर जाता है तब सबसे ज्यादा चक्कर खाता है और चक्कर खाते-खाते जल जाता है। हो सकता है कि हिन्दुस्तान इस पतंगे के चक्कर में से न बच सके। मेरा फर्ज है कि आखिरी दम तक उसमें से उसे और उसके मार्फत जगत को बचाने की कोशिश करूं। मेरे कहने का निचोड़ यह है कि मनुष्य जीवन के लिए जितनी जरूरत की चीज है, उस पर निजी काबू रखना ही चाहिए। अगर न रहे तो व्यक्ति बच ही नहीं सकता। आखिर तो जगत् व्यक्तियों का ही बना है।

अगर ऐसा समझोगे कि मैं आज के देहातों की बात करता हूं कि तो मेरी बात नहीं समझोगे। मेरे देहात आज मेरी कल्पना में ही है। आखिर में तो हरएक मनुष्य अपनी कल्पना की दुनिया में ही रहता है। इस काल्पनिक देहात में देहाती जड़ नहीं होगा—शुद्ध चैतन्य होगा। यह गंदगी में, अंधेरे कमरे में जानवर की जिन्दगी बसर नहीं करेगा। मर्द और औरत दोनों आजादी से रहेंगे और सारे जगत् के साथ मुकाबला करने को तैयार रहेंगे। वहां न हैजा होगा, न प्लेग होगी, न चेचक होंगे, कोई आलस्य में रह नहीं सकता है, न कोई ऐश आराम में रहेगा। सबकी शारीरिक मेहनत करनी होगी। इतना चीज होते हुए मैं ऐसी बहुत-सी चीजों का ख्याल करा सकता हूं जो बड़े पैमाने पर बनेगी। शायद रेलवे भी होगी, डाकघर, तारघर भी होंगे, क्या होगा क्या नहीं, उसका मुझे पता नहीं, न मुझको उसकी फिकर है। असली बात को मैं कायम कर सकूं तो बाकी आने की और रहने की खूबी रहेगी। और असली बात को छोड़ दूं तो बस छोड़ देता हूं।

मैं चाहता हूं कि हम दोनों एक-दूसरे को अच्छी तरह समझ लें। उसके दो सबब हैं। हमारा संबंध सिर्फ राजकारण का ही नहीं। उससे कई दरजे गहरा है। उस गहराई का मेरे पास कोई नाम नहीं है। वह संबंध टूट भी नहीं सकता। इसलिए मैं चाहूंगा कि हम एक-दूसरे की राजकारण में भी भलीभांति समझें। दूसरा कारण यह है कि हम दोनों में से एक भी अपने को निकम्मा नहीं समझते हैं। हम दोनों हिन्दुस्तान की आजादी के लिए ही जिन्दा रहते हैं और उसी आजादी के लिए हमको मरना भी अच्छा लगेगा। हमें किसी की तारीफ की दरकार नहीं है। तारीफ हो या गालियां—एक ही चीज है। खिदमत में उसे कोई जगह ही नहीं है। अगर मैं 125 वर्ष तक सेवा करते-करते जिन्दा रहने की इच्छा करता हूं तब भी मैं आखिर में बूढ़ा हूं और तुम मुकाबले में जवान हो। इसी कारण मैंने कहा है कि मेरे वारिस तुम हो। कम-से-कम उस वारिस को मैं समझ लूं और मैं क्या हूं वह वारिस भी समझ ले तो अच्छा ही है और मुझे चैन रहेगा। ❑

स्वदेशी गीत

❑ *वीणा होंडा*

मेरा हो तन स्वदेशी, मेरा हो मन स्वदेशी।
मर जाऊं तो भी मेरा होवे कफन स्वदेशी।।

जो हाथ से बना हो, या गरीब से लिया हो।
जिसमें स्नेह भरा हो, वह चीज है स्वदेशी।।

कर शक्ति का विभाजन, मिटे पूंजी का शासन।
बने गांव स्वावलंबी, वह नीति हो स्वदेशी।।

जो गांव में बना हो, और गांव में खपा हो।
जो गांव को बसाये, वह काम हो स्वदेशी।।

मानव वही है जिसने, मानव का दर्द जाना।
जो करे मनुष्यता की, रक्षा वही स्वदेशी।।

चट्टान टूट जाये, तूफां घुमड़ के आये।
गर मौत भी पुकारे, तो भी लक्ष्य हो स्वदेशी।।

धर्मों का रूपांतर शिक्षा में

❑ काका कालेलकर

"What shall be the religion of future"?

"All the established religions of the world are in the melting pot today. The religion of the future will emerge out of the amalgam of all these and it is going to be a religion of education."

किसी पश्चिमी विद्वान के साथ चर्चा करते जो जवाब दिया था, वह ऊपर के शब्दों में था। धर्ममात्र श्रद्धा के विषय होते हैं। और इसीलिए जब वे संगठित होते हैं और समाज-मानस पर सत्ता हासिल करते हैं, दीर्घजीवी होते हैं।

यह भी पाया जाता है कि बाह्य आक्रमणों से धर्मों का नाश कभी भी नहीं हुआ है। धर्मों का नाश होता है आंतरिक दोषों के बढ़ने से। और काल गति के कारण उनकी उपयोगिता नष्ट होने से।

धर्म भी आखिरकार मानवी संस्था हैं, मानवी मस्तिष्क, मानवी हृदय और मानवी जीवन की ईजाद है। धर्म जैसी प्राणवान संस्था में जैसे दोष आते हैं, उसमें से निकल भी जा सकते हैं।

कभी-कभी पुराने धर्मों में एक नई जबरदस्त प्रेरणा प्रवेश करती है। ऐसा होने से उस धर्म का कायाकल्प होता है। फिर तो नाम पुराना, श्रद्धा की बुनियाद पुरानी, निष्ठावान अनुयायियों की संख्या भी वही, लेकिन धर्म बिल्कुल नया ही रूप लेकर समाज में नवचैतन्य पैदा करता है।

लेकिन ऐसे नवसंस्करणों की भी एक कुदरती मर्यादा होती है। मानव की बुद्धिमत्ता, तरह-तरह के विराट संगठन चलाने की क्षमता, जीवनानुभूति में फैला हुआ विज्ञान का जामन और मानव जाति का निश्चित किया हुआ जीवन का नया प्रस्थान, इन सब कारणों से सबके-सब धर्म अब कालग्रस्त हो गये हैं। केवल नव संस्करणों से उनका काम अब नहीं चलेगा। अब मनुष्य-हृदय पर और उसके सामाजिक जीवन पर जिस प्रेरणा का अधिराज्य स्थापित हुआ है वह प्रेरणा धर्मसंस्था के द्वारा काम नहीं कर सकेगी। धर्मसंस्थाओं का स्वभाव है कि देखते-देखते वे क्रिस्टलाइज हो जाती हैं, निश्चित और कायमी आकार धारण करती हैं। आइन्दा की मानवी प्रेरणा क्रिस्टल के अंदर, स्फटिक या बिलोर के रूप में काम नहीं कर सकेंगी। जीवन ने स्वातंत्र्य का आनंद चखा है, अब वह हद से ज्यादा बंधन नहीं कबूल करेगा।

इसलिए आइंदा धर्मों का आजतक बिलोरी रूप छोड़ देना पड़ेगा। उसे संस्कृति के नाम से वातावरण या वायुमंडल का स्वरूप लेना पड़ेगा और जब धर्मों को इस नई आवश्यकता का साक्षात्कार होगा तब वे नई-नई शिक्षा-पद्धतियों का अंगीकार करेंगे। धर्मसंस्था का रूपांतर होकर शिक्षा-संस्था का एक नया ही आविष्कार होगा।

आजतक मानवी जीवन का संगठन धर्मों के द्वारा हुआ, राजनीति के द्वारा हुआ। आजकल अर्थनीति सार्वभौम है, लेकिन आइंदा इनका नहीं चलेगा। जीवन-संगठन और जीवन विकास का भार अध्यातमक प्रेरित शिक्षा संस्था के हाथ में ही जायेगा।

मैं मानता हूं सबकी-सब धर्म संस्थाएं अपना कायाकल्प करके शिक्षा-पद्धति का रूप धारण करेंगी। इतना ही नहीं, अपना नामरूप भी छोड़ देंगी ओर इसमें प्रारंभ होगा हिन्दू धर्म की ओर से। हिन्दू धर्म का नाम है सनातन धर्म, और सनातन की व्याख्या है नित्यनूतन। इस व्याख्या के अनुसार हिन्दू धर्म का ही सबसे पहले और सबसे आमूलाग्र परिवर्तन होगा और वह सब धर्मों का समन्वय करके शिक्षाधर्म बनकर दुनिया की सेवा करेगा। यही हालत सब धर्मों की होने वाली है।

इसलिए हम न केवल सब धर्मों का गहरा अध्ययन करें, किन्तु यह भी जरूरी है कि भिन्न-भिन्न शिक्षा-पद्धति की बुनियाद में कौन-कौन सी जीवन-निष्ठाएं हैं यह देखकर, टटोलकर आखिरकार आज की हमारी सार्वभौम जीवन-निष्ठा के अनुसार नई शिक्षा-पद्धति चलावें।

मानव-कल्याण का चिन्तन करके गांधीजी ने घोषित किया कि सत्य और अहिंसा ही इस जमाने की और सदा की सार्वभौम जीवन-निष्ठा है। इस अहिंसा में युद्ध-निषेध से भी बढ़कर है शोषण-त्याग और कौशल्ययुक्त शरीर-श्रम। इसलिए निष्कपट प्रतारणाशून्य सदाचार, गोपनीयता का अभाव, शांति की उपासना, वर्ग-वर्ग के बीच सहयोग और सामंजस्य, स्पर्धा का त्याग, कौशल्य युक्त परिश्रम, स्वावलंबन और परस्परावलंबन, ज्ञानोपासना और कल्याणोपासना इत्यादि शुभ निष्ठाओं की स्थापना और विकास के अनुकूल नई शिक्षा-पद्धति, नई तालीम का आदर्श विकसित करना है, उसे सर्वमान्य बनाना है और उसके हाथ में सामाजिक जीवन के सूत्र सौंप देने हैं।

यही है आज का युगकार्य। ❑

आज की मूलभूत समस्या सांस्कृतिक

❑ दादा धर्माधिकारी

संस्कृति, चाहे वह पश्चिम की हो या पूर्व की हो, अब उस मुकाम पर पहुंच गयी है कि या तो उसमें वास्तविकता आएगी, नहीं तो वह नहीं रहेगी। यह बात आज की सारी सांस्कृतिक संस्थाओं को समझ लेना चाहिए। अब तक संस्थाओं ने संगठनों (राज्य-संस्था, धर्म-संस्था आदि) ने समाज का नियंत्रण किया है। धार्मिक संस्थाओं ने सबसे अधिक नियंत्रण किया है। धर्म की जितनी पकड़ मनुष्य के दिमाग पर है, उतनी और किसी की नहीं। जितने पाप धर्म करवा सकता है उतने और कोई नहीं करवा सकता।

क्या मनुष्य का स्वरूप अकर्म है या सहज कर्म है? और सहज कर्म की प्रेरणा क्या होगी? ये दो सवाल उठते हैं। यानी शास्त्रीय कर्म तो निकल जाता है कि करोगे तो पुण्य लगेगा, नहीं करोगे तो पाप लगेगा। शास्त्रीय कर्म का मतलब है, वर्णाश्रम का कर्म। इसे आपको ठीक तरह समझ लेना चाहिए। यह न तो अरविन्द मान सकते थे, न गांधीजी मान सकते थे और न राजाजी मान सकते थे। यहां मैं दो-चार ही नाम ले रहा हूं। ऐसा तो कोई नेता नहीं है, जिसने गीता पर न लिखा हो। इन सबने वर्णाश्रम की बात कही है, लेकिन वर्ण को एक शास्त्रीय कर्म नहीं माना है।

मनुष्य के लिए परेशानी का विषय यह है कि वह ऐसी कौन-सी जगह बनवाये कि जहां सब लोग जाएं। आज तो लोग बाजार में भी बंट गये हैं, जैसे हिन्दू दुकानें, मुसलमान दुकानें। तो मनुष्य बेचारे को कहीं जगह ही नहीं है। तो, क्या दुनिया में यह सेक्यूलर धर्म या संप्रदाय-निरपेक्षता होगी? क्या इसी धर्म या संप्रदाय में रहने से शांति या मुक्ति मिल सकेगी? मैंने आपके पास केवल जिज्ञासाएं रखी हैं।

आज हम इस नतीजे पर पहुंच गये हैं कि राजनीतिक, आर्थिक और सामाजिक स्वतंत्रता ही अकेले काफी नहीं है, इनके आगे भी कोई स्वतंत्रता है, जो मनुष्य के जीवन को संपन्न बनाती है। यूरोप और उत्तर अमेरिका के लोग इन तीनों स्वतंत्रता का उपयोग कर चुके हैं। ये लोग जिस संपन्नता का अनुभव कर चुके हैं, इस संपन्नता के बाद की जो खोज है, वह आधुनिक मानव की खोज है, जिसका आरंभ हमारे यहां होता है।

कार्ल मार्क्स ने कहा था कि ऐतिहासिकता का आरंभ वर्ग-विग्रह के बाद होगा। मैं निवेदन करना चाहता हूं कि राज्य-संस्थाओं और धर्म-संस्थाओं का जिस दिन अंत होगा, उस दिन धार्मिकता का आरंभ होगा। मनुष्य की धार्मिकता का आरंभ संगठित धर्म के बाद होगा। इसको कहने वाला आधुनिक पैगमंबर तो जे. कृष्णमूर्ति हैं। जो आधुनिकतम बातें कहते हैं।

जब ये सारे 'हरे राम, हरे कृष्ण' वाले थक जायेंगे, तब अंत में वे कृष्णमूर्ति के पास पहुंचेंगे। लेकिन पहुंचने वाले वहीं हैं, क्योंकि बीच में कहीं भी इस समस्या का समाधान नहीं है। यह आज की सांस्कृतिक समस्या है। इसी को आप आज की आधुनिकतम आध्यात्मिक समस्या समझ लीजिए। असल में, यह एक जिज्ञासा है, जो सोचने वाले हैं, उनके सामने रखना चाहता हूं। इस पर वे सोचें, यह वास्तविकता है, वाद-विवाद नहीं है। गीता में मानवेतर कर्मयोग है या नहीं है? संन्यास योग है या कर्मयोग है? फिर ईश्वर और जीव एक हैं या दो हैं? हमको पता नहीं।

जब तक मनुष्य भीतर से एक न हो, मनुष्य मनुष्य के साथ रह नहीं सकता। सुख-दुख की संवेदना जब तक मनुष्यों की समान नहीं होगी, तब तक मनुष्य साथ नहीं रह सकते। दूसरे के दुखों से मैं दुःखी होऊं, दूसरे के सुख से सुखी बनूं, यह तभी हो सकता है, जब हम दोनों में कहीं मौलिक एकता हो। आपकी संवेदना और दूसरे की संवेदना में समानता हो।

दक्षिण अफ्रीका के एक नीग्रो नेता ने कहा कि मेरी चमड़ी काली है, तुम्हारी गोरी है। मेरे बाल घुंघराले हैं, तुम्हारे सीधे हैं। मेरे होंठ कुछ बड़े हैं, तुम्हारे छोटे हैं। लेकिन इन सबके भीतर मूल में तुममें और मुझमें एकता है, वही मानवता है। तो उससे पूछा गया कि तुम नीग्रो लोगों का उद्धार कैसे होगा? उसने कहा कि गोरे आदमी का दिल काला हो गया है, जिस दिन उसका दिल शुभ्र हो जायेगा, आप में और हम में फर्क नहीं रहेगा।

यह सवाल हमारे यहां भी है। कानून तो बन गया, लेकिन अछूत दबाए जा रहे हैं, उनके मकान ही नहीं, मनुष्य जलाए जा रहे हैं। यह धर्म के नाम पर ही तो हो रहा है न? महाराष्ट्र में नवबौद्ध आपकी मूर्तियां फेंक रहे हैं। अब उसके लिए मुसलमानों के आने की जरूरत नहीं है। आपने कभी इस पर सोचा? आपके सामने एक समस्या के रूप में रखकर इसको छोड़ दूंगा।

इस देश में आदिवासी गाय का मांस खाते हैं। शायद आपको पता न हो, हमारे कार्यकर्ता सारी जगह घूमते हैं, उन्हें मालूम है। यहां से ज्यादा नगालैंड और असम में खाते हैं। गाय का दूध मिलता ही नहीं, गाय खाई जाती है। लेकिन दंगा होता है। यह शक होने पर कि मुसलमान के पास गाय का चमड़ा है। ज्यादातर दंगे गाय को लेकर हिन्दू-मुसलमान के होते हैं। नवबौद्ध आपकी मूर्तियां फेंक रहे हैं, लेकिन जब दंगे होंगे, तो हिन्दू-मुसलमान के बीच होंगे।

आप इस पर सोचिए कि यह सब क्या हो रहा है? कहीं तो इसकी खोज होनी चाहिए। इन सारी समस्याओं को मैंने मूलभूत समस्या के रूप में आपके सामने रखा। आज के मनुष्य की खोज आध्यात्मिक खोज है। उसका आरंभ हुआ है भौतिकता की समाप्ति के बाद। हमारे यहां तो अभी भौतिकता की भी समाप्ति नहीं हुई है। ❑

मजहबों की सच्चाई

❑ मौलाना अबुलकलाम आजाद

अबुलकलाम आजाद ने कुरानशरीफ के पहली सूरत (प्रकरण) अलफातिहा पर दो सौ पन्नों का भाग्य लिखा है, उसमें संपूर्ण कुरान का दर्शन एवं उपदेश का सार देने की कोशिश उन्होंने की है, अलफातिहा में कुल सात आयतें हैं, छठी आयत दूह दिनस्सिरा तुलमुस्तक दिखा तू हमें मांग सरल समझाते हुए उन्होंने कुरान किस बात के लिए निमंत्रण देता है, इस विषय पर एक प्रकरण लिखा है और उसका सार स्वयं उन्होंने ही प्रस्तुत किया है। उसका शब्दशः अनुवाद यहां प्रस्तुत है। –सं.

कुरान के आगमन के वक्त दुनिया का धार्मिक विचार इससे अधिक व्यापक नहीं था कि वंशों, घरानों और टोलियों को सामाजिक हद बंदियों की तरह मजहबों (धर्मपार्थी) की एक खास जत्थाबंदी कर ली गयी थी। हर जत्थाबंदी का आदमी समझता था कि दीन सच्चाई सिर्फ उसी के हिस्से में आयी है। जो मनुष्य उसके मजहब में दाखिल है वह मुक्त है और जो उसमें दाखिल नहीं है वह मुक्ति से वंचित है।

प्रत्येक जत्थे के पास मजहब का मूल और वास्तविकता केवल उसके बाह्य आचार और विधि थे। ज्योंहि एक मनुष्य उन्हें स्वीकार लेता विश्वास किया जाता है कि मुक्ति और कल्याण उसे प्राप्त हो गये। ये आचार या विधि थे। उपासना के कुछ स्वरूप बलि देने की विधि, विशेष प्रकार का भोजन करना या न करना, किसी खास तरह का हद सहन रखना या न रखना।

ये आचार और विधि प्रत्येक मजहब के भिन्न-भिन्न होने के कारण और प्रत्येक समूह की सामूहिक अभिलाषाएं एक सी न होने के कारण प्रत्येक मजहब के अनुयायी का विश्वास था कि दूसरा मजहब मजहबी सच्चाई से खाली है, क्योंकि उसके आचार और विधि वैसे नहीं थे, जैसे कि स्वयं उसने अपना रखे थे।

हर मजहबी गिरोह का दावा सिर्फ यही नहीं था कि वह सच्चा है बल्कि यह था कि दूसरा झूठा है। नतीजा यह था कि हर गिरोह सिर्फ इस पर ही संतुष्ट नहीं रहता कि अपनी सच्चाई घोषित करें, बल्कि यह भी जरूरी समझता कि दूसरों के खिलाफ पक्षद्वेष और घृणा फैलाये। इस परिस्थिति ने मानवजाति की एक स्थायी युद्ध की हालत में फंसा दिया था। मजहब और खुदा के नाम पर हर समूह से घृणा करता और उसका खून बहाना उचित समझता था। परंतु कुरान ने मानव जाति के सम्मुख मजहब की विश्वव्यापी सच्चाई का तत्त्व प्रस्तुत किया। उसने सिर्फ यही नहीं बताया कि हर मजहब में सच्चाई बल्कि साफ-साफ कह दिया कि सारे मजहब सच्चे हैं। उसने कहा दीन ईश्वर की सर्वसाधारण देन है। इसलिए संभव नहीं कि किसी एक जमात का उसमें हिस्सा न हो।

उसने कहा कि ईश्वर के सारे प्राकृतिक नियमों की भांति मनुष्य के आध्यात्मिक भलाई का सिद्धांत भी एक ही है और सबके लिए है। इसलिए मजहब के अनुयायियों की सबसे बड़ी पथ-भ्रष्टता यह है कि उन्होंने ईश्वरी धर्म (दीन इलाही) की एकता को भूलकर अलग-अलग गिरोह बंदिया कर ली हैं और हर गिरोह बंदी दूसरे से लड़ रही है।

उसने बताया कि ईश्वर का धर्म (खुदा की दीन) इसलिए नहीं था कि भेद और कलह का कारण बन जाये। इसलिए इससे बढ़कर पथ-भ्रष्टता क्या हो सकती है कि जो चीज दूर करने के लिए आयी थी उसी को भेद की बुनियाद बना लिया है।

उसने बताया कि एक वस्तु है धर्म और एक है शास्त्र-पद्धति, या शास्त्र-प्रणाली। धर्म एक ही और एक ही तरह से सबको दिया गया है। अलबत्ता पद्धति और प्रणाली के फर्क से मूल धर्म भिन्न-भिन्न नहीं हो सकते। तुमने धर्म की वास्तविकता तो भुला दी है और केवल शास्त्र-पद्धति और शास्त्र-प्रणाली के फर्क पर एक-दूसरे को झुठला रहे हो।

उसने बतलाया कि तुम्हारी मजहबी गिरोहबंदियों और उसके बाहांगों और विधियों को मानवीय मुक्ति और कल्याण में कोई खल नहीं। ये गिरोहबंदियों (गुटबंदियां) तुम्हारी बनायी हुई हैं, वरना ईश्वर का बनाया हुआ धर्म तो एक ही है। वह वास्तविक धर्म है, वह कहता है निष्ठा और सत्कर्म का सिद्धांत।

उसने साफ-साफ शब्दों में घोषणा की कि उसके आहवान का हेतु इसके अतिरिक्त कुछ नहीं है कि सब मजहब सच्चे हैं, परंतु उन मजहबों के अनुयायी सत्य से परावृत हुए हैं। अगर वे अपनी भूली सत्यता नये सिरे से स्वीकार करे तो मेरा काम पूरा हो गया और उन्होंने मुझे मान्य कर लिया। समस्त मजहबों का सही संयुक्त और सर्वसम्मत सच्चाई है, जिसे वह (कुरान) अद्दीन (धर्म) और अल्इस्लाम (प्रभशरणति) के नाम से पुकारता है। यह कहता है, खुदा का दीन इसलिए नहीं है कि एक मनुष्य दूसरे मनुष्य से घृणा करे बल्कि इसलिए है कि प्रत्येक मनुष्य दूसरे मनुष्य से प्रेम करे और सब एक ही प्रभु की भक्ति के सूत्र में बंधकर एक हो जायें। वह कहता है जब सबका प्रभु एक हे, जब सबका उद्देश्य उसी की भक्ति है, जब हर इंसान को वही होना है जैसा कि कुछ उसका आचरण है, तब खुदा और मजहब के नाम पर→

भूमि अधिग्रहण

गुजरात के भावनगर में लाइमस्टोन खनन के विरुद्ध आंदोलन

❑ मुदिता विद्रोही

गुजरात को देश में सबसे लंबा दरिया किनारा मिला है। उसी समुद्र के किनारे ने गुजरात को समृद्ध बनाने में भी बड़ी भूमिका निभाई है। लेकिन आज स्थिति यह है कि यह पूरा का पूरा समुद्र का किनारा ही लोगों की और पर्यावरण की तबाही का उद्भव स्थान बन गया है। समुद्र के किनारे-किनारे जमीन में कई तरह के खनिज हैं। यही सब खनिजों के लिए इस जमीनों को सरकार और निजी कंपनियों द्वारा अधिग्रहित किया जा रहा है। ज्यादातर जगहों पर यह काम नियम कानूनों की अवमानना करके और स्थानीय लोगों के विरोध के बावजूद उनके ही संसाधनों का दोहन करके किया जा रहा है।

गुजरात के भावनगर जिले में एक से ज्यादा जगहों पर इस तरह के आंदोलन चल रहे हैं। इसमें से एक जगह है नीचा कोटडा। नीचा कोटडा और अन्य बारह मिलाकर कुल तेरह गांवों की जमीन में चूने का पत्थर या लाइमस्टोन है। यह तेरह गांव महुवा और तलाजा तहसील के हैं। सभी गांवों की शत-प्रतिशत जनसंख्या खेती और पशुपालन से अपना गुजारा करती है। यहां की जमीन उपजाऊ है और साल में कम-से-कम दो फसलें तथा कहीं-कहीं तो तीन फसलें भी ली जाती हैं। महुवा तहसील के 9 और तलाजा तहसील के 4, कुल मिलाकर 13 गांव, जिसमें समावेश होता है—नीचा कोटडा, ऊंचा कोटडा, तल्ली, कलसार, दयाल, मेथला, बाम्भोर, मधुवन, जान्जमेर, नवा राजपरा, जुना राजपरा, रेलिया और गढ़ुला। इन तेरह गांवों की करीब 1500 हेक्टेयर जमीन अल्ट्राटेक कंपनी को सरकार द्वारा दे दी गयी है। इन 1500 हेक्टेयर में से 150 हेक्टेयर जमीन मालिकों के पास से कंपनी ने आज से बीस साल पहले ले ली थी। लेकिन इतने साल तक उसका वास्तविक कब्जा नहीं लिया था। बाकी की 90 प्रतिशत जमीन करीबन 1350 हेक्टेयर निजी मालिकी की होने के बावजूद सरकार ने यह कहकर कंपनी

→ये लड़ाई और झगड़े क्यों हैं?

दुनिया के मजहबों का फरक केवल फरक की ही सीमा तक नहीं रहा है, बल्कि घृणा और शत्रुता कैसे दूर हो? यह तो नहीं हो सकता है कि सारे मजहबों के अनुयायी इतना ही दावा नहीं करता है कि दूसरे झूठे हैं। इसलिए अगर उनके दावे मान लिये जायें तो स्वीकार करना पड़ेगा कि हर एक मजहब एक ही समय सच्चा भी है और झूठा भी। यह भी नहीं हो सकता कि सबको झूठा ठहराया जाये क्योंकि अगर सभी मजहब झूठे हैं तो फिर मजहब की सच्चाई कहां? इसलिए अगर कोई हालत झगड़ा दूर करने की हो सकती, तो वह वहीं है जिसका आह्वान लेकर कुरान प्रकट हुआ है सो मजहब सच्चे हैं, क्योंकि मूल दीन (असल धर्म) एक ही है और सबको दिया गया है, परंतु मजहब के तमाम अनुयायी सच्चाई से परावृत्त हो गये हैं। क्योंकि दीन की वास्तविकता और एकता नष्ट कर दी गयी है और इन पथभ्रष्टों ने अपनी अलग-अलग टोलियां बना ली हैं। अगर इन भूले रास्तों में लोग वापस लौट आ जायें और अपने-अपने मजहब के यथार्थ शिक्षा का अनुकरण करते रहें तो मजहबों के तमाम झगड़े खत्म हो जायेंगे। हर गिरोह देख लेगा कि उसका रास्ता भी मूलतः वही है जो और सारे समूहों का है। कुरान कहता है, सारे मजहबों की यही संयुक्त और सर्वसम्मत वास्तविकता है, यानी मानव जाति के लिए वास्तविक धर्म है और इसी को वह अद्इस्लाम के नाम से पुकारता है।

मानव जाति का पारस्परिक मेलजोल और एकता के जितने भी संबंध हो सकते थे सब मनुष्यों के हाथों टूट चुके। सबका वंश हो गये। सबकी राष्ट्रीयता एक थी, परंतु अनगिनत राष्ट्रीयताएं बन गयीं। सबकी वतनीयता (देशवासीयता) एक थी, परंतु सैकड़ों वतनीयतों में बंट गये। सबका दर्जा एक था परंतु श्रीमान्, गरीब, सभ्य, असभ्य, ऊंच, नीच के बहुत से दर्जे ठहरा लिये गये। ऐसी हालत में कौन-सा संबंध है, कौन-सा सूत्र है, जो इन समस्त मानव एक ही पंक्ति में खड़े हो जा सकते हैं। कुरान कहता है कि खुदापरस्ती का रिश्ता (ईश्वरोपासना का संबंध) यही एक संबंध है, सूत्र है, जो मानवता का बिछुड़ा हुआ घराना फिर आबाद कर सकता है। यह श्रद्धा कि हम सबका प्रभु एक ही हैं और हम सबके सिर उसी एक चौखट पर झुके हुए हैं। सहमति और अद्वैत को ऐसी भावना पैदा कर देती है कि संभव नहीं कि मनुष्य के बनाये हुए भेद उससे अधिक हैं, प्रभावी बन जाये।

कुरान बार-बार कहता है मेरी तालीम (शिक्षा) इसके सिवा कुछ नहीं कि मैं खुदा परस्ती और नेकअमली (ईश्वरभक्ति और सत्कर्म) को और बुलाता हूं, मैं किसी मजहब को नहीं झुठलाता। मैं किसी रहनुमा (पैगम्बर) से इन्कार नहीं करता सबको एक-सा तस्दीक (सभ्यता) और सबकी मुरतरका और मुताफिका तालीम (संयुक्त और सर्वसम्मत शिक्षा) मेरा दस्तुरूलु अमल (शासन प्रणाली) है।

(तारजुमानुल् कुरान, पं. 235 से) ❑

के नाम कर दी कि जमीन भले ही मालिक की हो, परंतु उसके नीचे का खनिज सरकार की मालिकी का होता है। इसलिए 50 साल की लीज पर खनन के लिए कंपनी को दी जाती है। जमीन दे देने के बाद तीन बार उसका हेतु परिवर्तन भी किया गया। सबसे पहले जमीन 'इंडियन रेयोन' कंपनी के लिए ली गयी, उसके बाद ग्रासिम और अंत में 2015 में अल्ट्राटेक कंपनी के नाम कर दी गयी।

जून 2016 में इन जमीनों पर खनन करने के लिए तीन अलग-अलग जन सुनवाइयां आयोजित की गयी। तीनों जन-सुनवाइयों में स्थानीय लोगों ने बड़ी संख्या में हिस्सा लिया और सौ प्रतिशत लोगों ने खनन के विरोध में अपना मत लिखित स्वरूप में प्रकट किया। इसके बावजूद कंपनी को पर्यावरणीय मंजूरी दी गयी। इस विस्तार के हजारों लोग जहां पीढ़ियों से खेती और पशुपालन से अपना गुजारा चलाते हैं, वहां कंपनी की वेबसाइट बताती है कि कंपनी खनन के काम के लिए तीन चरण में स्किल्ड और अनस्किल्ड मिलाकर मात्र 120 लोगों को रोजगार देगी।

यह पूरा विस्तार खेती और पशुपालन का विस्तार है। चारों तरफ हरे-हरे खेत और बाड़ियां हैं। सभी तरह के फल, सब्जियां और धान यहां उगते हैं। खेती और पशुपालन भी एक-दूसरे के पूरक व्यवसाय हैं। एक के बिना दूसरे का जिन्दा रह पाना मुश्किल है। खनन का काम शुरू होते ही धीरे-धीरे सारी जमीन चली जायेगी ओर जो बचेगी वह भी खेती के लायक नहीं रहेगी। ऐसी स्थिति में पशुपालन कर पाना भी असंभव हो जायेगा। लोगों के जीवन का आधार ही छिन जायेगा। इस बात को लोग अच्छी तरह समझते हैं और इसलिए सभी लोग खनन की मंजूरी और प्रवृत्ति का जागरूकता से विरोध कर रहे हैं।

खनन के दुष्प्रभावों से तो हम सब वाकिफ हैं ही। खनन भले ही कुछ जमीन पर हो, उस क्षेत्र की पूरी जमीन खेती के लायक नहीं बचती। गहराई तक खुदाई होने के कारण सारा भूगर्भ जल खिंचकर उस तरफ चला जाता है और बाकी के कुंवें सूख जाते हैं। सैकड़ों सालों से बने पानी के नैसर्गिक बहाव की दिशा में अड़चन आने से कहीं पानी इकट्ठा हो जाता है। कहीं अपने बहाव की दिशा बदल लेता है और खेती में बड़ा नुकसान पहुंचाता है। यह विस्तार समुद्र के किनारे का विस्तार है। जमीन के अंदर का लाइमस्टोन यहां कुदरती दीवाल का काम करता है और दरिया के पानी के अंदर आने से रोकता है। जमीन के अंदर से अगर लाइमस्टोन को निकाल लिया जाय तो इस खाली जगहों को भरने के लिए समुद्र का पानी अंदर घुसेगा और पूरे विस्तार के भूगर्भजल और जमीन को खारा बना देगा। यहां पड़ोस के अमरेली जिले में अल्ट्राटेक ने इसी तरह लाइमस्टोन के खनन का काम किया है, जिसके परिणामस्वरूप पूरा विस्तार बंजर और खारा बन गया है। जहां मीठा पानी था वहां भी अब समुद्र का पानी घुस गया है। जो उपजाऊ जमीन थी वह अब बंजर बन गयी है। लोग अपने खेतों से बेदखल हो गये और रोजगार के अन्य कोई अवसर न होने पर बड़ी जनसंख्या बेरोजगार और बेबस है। खनन से उड़ती धूल उड़कर आसपास के विस्तारों में जहां खेत हैं, वहां फसलों पर जाकर बैठती है और खेती को असंभव बना देती है। लगातार उड़ने वाली डस्ट के कारण स्थल पर काम करने वाले मजदूर और पूरे विस्तार में रहने वाले लोगों के स्वास्थ्य, खास करके फेफड़ों पर गंभीर असर होती है। लाइमस्टोन में सिलिका होने की वजह से खनन में काम करने वाले कामगारों को सिलिकोसिस की बीमारी होने का भी गंभीर खतरा रहता है। इसके अलावा कैंसर जैसे जानलेवा रोगों का भी खतरा रहता है। इन सभी बातों को अनदेखा करते हुए मात्र और मात्र एक निजी कंपनी के फायदे के लिए खेती की पूरी जमीन सरकार ने कंपनी के हाथ में दे दी है।

कानूनी तौर पर कंपनी को पछाड़ने के लिए गांव के लोगों द्वारा नेशन ग्रीन ट्रिब्यूनल में केस दाखिल किया गया और पूना में चला परंतु फरवरी 2019 में कोर्ट ने केस को यह कहकर खारिज कर दिया कि आपने केस दर्ज करवाने में बहुत देरी कर दी है। अब गांव के लोग सर्वोच्च न्यायालय का दरवाजा खटखटाने की तैयारी कर रहे हैं। आखिर कोई तो रास्ता खोजना होगा।

एक तरफ कानूनी लड़ाई चल रही है। लेकिन यह बात जाहिर है कि इस तरह के कोई भी संघर्ष को सिर्फ कानूनी लड़ाई लड़कर सफलता प्राप्त नहीं हुई। इसलिए स्थानीय लोग अहिंसक आंदोलन चलाते आये हैं। बार-बार लोगों ने सरकार में आवेदन-पत्र दिये हैं, अधिकारियों से मिलकर अपनी बात रखने की कोशिश की है, धरना दिया है, सभाएं की हैं, पत्रिका निकाली हैं और हर संभव कोशिश की है। दो-एक महीने पहले सभी गांवों के लोगों ने बड़ी संख्या में इकट्ठे होकर एक शांति मार्च निकाला और खनन की जगह पर जाकर सभी महिला और पुरुषों ने खोदी हुई जमीन को फिर से मिट्टी से भर दिया। जब-जब भी कंपनी की ट्रक लाइमस्टोन लेकर निकलती है, गांव की महिलाएं रास्ते पर ट्रक के आगे सो जाती हैं और ट्रक को किसी हाल में नहीं निकलने देती। इस तरह महिलाओं ने भी अपनी अपार शक्ति का परिचय दिया है। कभी-कभी काम रुकता है, फिर से दोगुनी तेजी से शुरू हो जाता है। कोर्ट में से काम पर स्टे नहीं मिल रहा। गांव के लोग अपनी आंखों के सामने अपनी जमीन को इस तरह तबाह होता नहीं देख पाते। पिछले महीने 2 जनवरी 2019 के दिन सभी गांववालों ने विवश होकर फिर एक बार यात्रा के स्वरूप में खनन की जगह पर जाना तय किया। इरादा शांतिमार्च करके पहुंचकर धुन करने का और शांति से काम रोकने की विनती करने का था। गांवों के महिला, पुरुष, जवान, बूढ़े और बच्चे सभी इस यात्रा में जुड़े और लगभग तीन हजार लोग यात्रा करते हुए खनन की जगह की ओर बढ़े, तभी रास्ते में बड़ी संख्या में पुलिस की फौज मिली। लोगों के आते ही पुलिस ने आंसू गैस छोड़ना शुरू किया। लोग फिर भी

पीछे नहीं हटे और आगे बढ़ते गये। पुलिस ने और ज्यादा आंसूगैस के गोले छोड़े और फिर बेरहमी से लाठीचार्ज की। पुलिस ने अपनी इस कार्रवाई में महिलाएं, बुजुर्ग या बच्चे को भी नहीं बख्शा। लोगों को काफी चोटें आयीं। इसके पश्चात् 92 महिला और पुरुषों को गिरफ्तार कर लिया गया, जिसमें बूढ़ी महिलाएं भी थीं। सभी को कस्टडी में ले जाकर भी खूब बेरहमी से पीटा गया, यहां तक की औरतों के कपड़े फट गये। पुरुष पुलिस के हाथों से महिलाओं पर लाठियां बरसाईं गयी और उनको गिरफ्तार किया गया। सभी पर पुलिस ने दफा 307 लगाई और किसी को जमानत नहीं मिली। डेढ़ दिन की कस्टडी के बाद सभी को कोर्ट ने भावनगर जेल में भेज दिया। 9 दिन के जेलवास बाद काफी कोशिशों के बाद लोगों को जमानत मिल पायी। इस घटना के बाद पूरे इलाके में दफा 144 लगा दी गयी है। 92 लोगों की जमानत हो जाने के बाद भी गांव के अन्य कई लोगों पर एफआईआर दर्ज की गयी। किसी को किसी भी तरह के आंदोलन, सत्याग्रह करने की इजाजत नहीं। दूसरी तरफ खनन का काम तेजी से चल रहा है।

इस स्थिति में किस तरह आंदोलन को जारी रखा जाय, यह एक बड़ा सवाल है। फिलहाल आंदोलन के युवा नेता भरत भील की अगवानी में लोग बड़ी संख्या में ऊंचा कोटडा गांव के मंदिर में धरना पर बैठे हुए हैं। भरतभाई भल ने घोषणा की है कि अगर आने वाले कुछ दिनों में उनकी बात पर सरकार ध्यान नहीं देती है तो उनके पास कोई रास्ता नहीं बचेगा और इसलिए वे आमरण उपवास पर बैठ जायेंगे।

यह पूरी स्थिति है, जिसमें सरकार का पर्यावरण विरोधी, खेती विरोधी, लोक विरोधी, लोकतंत्र विरोधी और हिंसक चेहरा सामने आ रहा है। लोग आखिर कब तक अपने मूलभूत अधिकारों के लिए इस तरह आंदोलन करते रहें और हिंसा का भाग बनते रहेंगे। ❑

ग्राम सभा की बात

❑ **डॉ. अनुज लुगुन**

साल 2013 में ओडिशा के नियमगिरि में वेदांता के बॉक्साइट खनन के मामले में सुप्रीम कोर्ट ने अपनी ओर से कोई फैसला न सुनाते हुए वहां की ग्राम सभाओं को निर्णय देने का अधिकार दिया था। यह संभवतः स्वतंत्र भारत का ऐसा ऐतिहासिक फैसला था, जिसमें आदिवासियों ने अपने निर्णय से दुनिया की एक बड़ी कंपनी को मात दिया था। यह ग्राम सभा के द्वारा संभव हुआ था।

ग्राम सभा की बात संवैधानिक रूप से पेसा अधिनियम 1990 में कही गयी है। खासतौर पर पांचवीं अनुसूची के क्षेत्रों (आदिवासी क्षेत्र) में ग्राम सभा को विशेष अधिकार दिये गये हैं। इसमें परंपरा का निर्वहन, गरीबी उन्मूलन, बाजार का प्रबंधन, विकास परियोजनाओं, भू-अर्जन एवं खनन पट्टा के लिए अनुमोदन से संबंधित शक्तियों के प्रावधान के जरिये ग्राम सभा की स्वायत्तता को विस्तार देने की कोशिश की गयी है। 'भारत जन आंदोलन' ने इसके लिए बड़े पैमाने पर आंदोलन किया था। 'हमारे गांव में हमारा राज' की संकल्पना ने अनुसूचित क्षेत्रों में वास्तविक आजादी की लहर को पैदा किया था। लेकिन, बहुत जल्दी ग्राम सभा के अधिकारों से बहुराष्ट्रीय पूंजी के हितों का टकराव शुरू हो गया और पेसा अधिनियम आंशिक रूप से भी लागू नहीं हो सका। आज पेसा अधिनियम के होते हुए भी बहुत बड़े पैमाने पर आदिवासी क्षेत्रों में जमीन की लूट जारी है।

ग्राम सभाओं द्वारा आदिवासी क्षेत्रों में उनके आत्मनिर्णय के अधिकार को सुनिश्चित करने की कोशिश है। ग्राम सभा आदिवासियों की जीवनशैली एवं उनकी स्वायत्ता को बरकरार रखने के लिए संविधान द्वारा प्रदत्त शक्ति है। इसमें शक्ति के विकेन्द्रीकरण का भाव भी है। लेकिन, सवाल है कि पूंजीवादी ढांचे के अंदर लोकतांत्रिक शक्ति का विकेन्द्रीकरण कितना संभव है? क्या निजी हित या पूंजी का हित समुदाय के हित से जुड़ सकता है? ग्राम सभा की परिकल्पना के केन्द्र में समुदाय है। समुदाय का निर्णय वहां प्रभावी है। लेकिन, आज खुद राज्य सत्ता संविधान द्वारा प्रदत्त शक्तियों को समुदायों के बीच वितरित करने के बजाय बहुराष्ट्रीय कंपनियों के लिए संवैधानिक प्रावधानों को 'बाइपास' कर रही है। ऐसे में सवाल है कि ग्राम सभा के अस्तित्व का स्वरूप क्या होगा? क्या बहुराष्ट्रीय निवेश और आम जन का आत्मनिर्णय साथ-साथ संभव है?

दरअसल, 'स्मार्ट सिटी' के जमाने में 'गांव' अप्रासंगिक किये जा रहे हैं। उसी का परिणाम है कि ग्राम सभाओं का अस्तित्व सिकुड़ रहा है। ग्राम सभाओं को स्वायत्तता देने का मतलब है बहुराष्ट्रीय पूंजी के अनियंत्रित प्रवाह में रुकावट। अनुसूचित क्षेत्रों में प्राकृतिक संसाधनों का बेलगाम दोहन ग्राम सभाओं की स्वायत्तता के रहते हुए संभव नहीं है। इसलिए विदेशी निवेश को आकर्षित करने के लिए 'भूमि अधिग्रहण' से संबंधित जो भी नये कानून बन रहे हैं, उसमें पेसा अधिनियम 1996 के प्रावधानों की घोर अनदेखी है। हाल के दिनों में कई ऐसे मामले सामने आये हैं, जहां प्रशासन की नीतियों और ग्राम सभा के बीच सीधी

टकराहट हुई है। भूमि अधिग्रहण से संबंधित कानूनों में ग्राम सभा के अधिकार निष्प्रभावी हैं। भारत जन आंदोलन के दिनों में 'न लोक सभा, न विधान सभा, सबसे ऊपर ग्राम सभा' की जो बात उठी थी, अब वह लगभग दफन हो रही है। नव उदारवाद के दौर में भारतीय लोकतंत्र के विकेन्द्रीकरण पर गहरा अघात पहुंचा है। देश के ज्यादातर हिस्सों में हो रहे जन आंदोलन इसके उदाहरण हैं।

ग्राम स्वराज की परिकल्पना गांधीजी ने की थी। गांधी जयंती के अवसर पर अन्य रूपों में गांधीजी को याद किया जाता है, लेकिन गांधी के विचारों में जहां जन समुदाय के साथ संसाधनों के बंटवारे की बात आती है, वहां सरकारें मौन रह जाती हैं। असगर वजाहत का एक महत्त्वपूर्ण नाटक है 'गोड्से ऐट गांधी.कॉम'। इस नाटक में एक दृश्य है, जिसमें गांधीजी के ऊपर देशद्रोह का मुकदमा इसलिए दायर किया जाता है, क्योंकि वे केन्द्र के शासन की जगह ग्राम सभा की नीतियों का अनुसरण करते हैं। यह आज की व्यवस्था का यथार्थ है। आज आदिवासी क्षेत्रों में जो जन प्रतिरोध उभर रहे हैं, उनका सैन्य दमन कर ग्राम सभा के प्रतिनिधियों को नक्सली होने के झूठे मुकदमों में बंद किया जा रहा है। वस्तुतः यह समाज के 'अंतिम जन' के विरुद्ध संसाधनों पर कब्जे की लड़ाई है।

आज पूंजी के संकेंद्रण ने शक्ति को भी संकेंद्रित किया है। गांवों के विकास की बात राजनीतिक जुमलों में तो कही जाती है, लेकिन गांवों के पास खुद अपने निर्णय का अधिकार नहीं है। आज ग्राम सभाओं के पास न अपनी कोई वित्तीय ताकत है और न ही कोई प्रशासनिक ढांचा है। अनुसूचित क्षेत्रों में ग्राम सभाओं की स्वायत्तता की जगह सरकार ने उसे पंचायतों से जोड़कर ब्यूरोक्रेसी के अधीन कर दिया है। हो सकता है कि 'स्मार्ट सिटी' के बड़बोलेपन के बीच आपको ग्रामसभा की बात शायद बेमानी लगे, लेकिन सोचिये कि क्या 'स्मार्ट सिटी' के जमाने में एक दिन भारत के सारे-के-सारे गांव 'स्मार्ट सिटी' में तब्दील हो जायेंगे? ❑

25 मार्च : विद्यार्थीजी पुण्य-तिथि विनम्र स्मरण

समाजसेवी पत्रकार गणेशशंकर विद्यार्थी

❑ **कुमार दिनेश प्रियमन**

समाजसेवी विद्यार्थी जी : देश के गरीब किसानों, मजदूरों, दलितों व वंचितों के समर्थक गणेश शंकर विद्यार्थी जीवन भर उन्हें ऊँचा उठाने के रचनात्मक कामों के बारे में सोचते व योजना बनाते रहे। गांधी जी के द्वारा स्थापित आश्रमों में रचनात्मक कामों के प्रयोगों से प्रेरित विद्यार्थी जी ने कानपुर से लगभग चालीस किमी दूर 'नरवल' नाम के छोटे गाँव, जो अब कस्बा बन गया है, को समाज सेवा का सघन क्षेत्र बनाने की योजना बनायी। तब दूसरे गाँवों की तरह यह गाँव भी स्थानीय जमींदारों द्वारा जनता पर किये जा रहे अत्याचारों से पीड़ित था। विद्यार्थी जी द्वारा इस गाँव को कर्मस्थली केन्द्र बनाते ही सभाएँ की जाने लगीं। पारस्परिक सहयोग, सहभागिता व गाँव-संगठन से राजनीतिक-सामाजिक हलचल बढ़ी तो नरवल गाँव का माहौल बदलने लगा। इसका असर पड़ोसी जिले फतेहपुर पर भी पड़ा। नरवल के सघन क्षेत्र के प्रमुख सहयोगी बने झण्डा-गान के रचयिता श्यामलाल पार्षद। पहले विश्वयुद्ध के समय पुलिस की मदद से चन्दा वसूली में जनता से की जा रही जबरदस्ती का विरोध करने पर पुलिस ने पार्षद जी की पिटाई कर दी। 'प्रताप' में इसकी कड़ी आलोचना की गयी। 1918 में होमरूल लीग का बहुत बड़ा जलसा नरवल में हुआ। विद्यार्थी जी उस जलसे के नायक थे। बाद में 12 मई, 1922 को लखनऊ जेल व 1924 में नैनी-इलाहाबाद की सेण्ट्रल जेल से व 1931 में नमक कानून के खिलाफ आन्दोलन में जेल से छूटने पर यहाँ विद्यार्थी जी का भव्य स्वागत हुआ।

विद्यार्थी जी की मेहनत से नरवल सामाजिक-सांस्कृतिक तथा राजनीतिक कार्यक्रमों सहित कुटीर उद्योगों की स्थापना के कारण रचनात्मक कामों का प्रमुख केन्द्र बन गया। कांग्रेस अधिवेशन दिसम्बर 1925 से पहले ही विद्यार्थी जी ने नरवल को स्वयं सेवकों के प्रशिक्षण केन्द्र के रूप में भी विकसित कर लिया था। इसके लिए वहाँ लगातार प्रशिक्षण शिविरों का आयोजन होता रहा। छुआछूत, जातीय विद्वेष, साम्प्रदायिकता, स्त्री-पुरुष भेद आदि सामाजिक बुराइयों को मिटाने व पारस्परिक सद्भाव, भाईचारा बढ़ाने के लिए सम्मिलित व सामूहिक भोजनालय व प्रीति-भोजों के आयोजनों से स्वयं सेवकों का जो प्रशिक्षित युवा समूह तैयार हुआ, उसने इस क्षेत्र सहित देश के अन्य आन्दोलन के केन्द्रों के सामने एक उदाहरण पेश किया। कानपुर के मजदूरों व नरवल के किसान-मजदूरों के बीच एका बना। गाँवों में प्रचलित अंधविश्वास व रूढ़िवाद से संघर्ष करने व सांस्कृतिक माहौल बनाने में मदद मिली, जिससे पूरे इलाके में विद्यार्थी जी का जन-समर्थन बढ़ता गया। नरवल के रचनात्मक कामों में आगे चलकर खाद बनाना, अखाद्य तेलों से साबुन बनाना और चर्खा चलाना आदि भी होने लगा।

नरवल सेवाश्रम की स्थापना : सन् 1925 में कानपुर के अखिल भारतीय

कांग्रेस सम्मेलन के बाद विद्यार्थी जी ने सरदार पटेल द्वारा बारडोली, गुजरात में स्थापित आश्रम की तरह नरवल में आश्रम की स्थापना करनी चाही। कानपुर के रामनाथ टण्डन व नरवल के ही निवासी श्री लक्ष्मी नारायण अग्निहोत्री व श्री अम्बिका प्रसाद बाजपेयी के साथ 20 फरवरी, 1929 को एक छोटे मकान में नरवल सेवाश्रम की स्थापना हुई। विद्यार्थी जी सेवाश्रम समिति के अध्यक्ष व श्यामलाल पार्षद सचिव नियुक्त हुए। सेवाश्रम में श्री बैजनाथ टण्डन की सेवाएँ यादगार रहीं। श्री नवल किशोर भरतिया, श्री लक्ष्मी नारायण द्विवेदी व श्री वंशीधर त्रिवेदी के अलावा श्री विश्वेश्वर ने अपनी जमीनें सेवाश्रम में दान कर दीं। सेवाश्रम में लगभग 400 स्वयं सेवक सरकार की रोक के बावजूद नमक कानून तोड़ते हुए नमक बनाते रहे, पास के गाँवों को नमक बनाने का प्रशिक्षण देते रहे और जेल जाते रहे। नरवल सेवाश्रम के आसपास के गाँवों में कई वाचनालयों व चर्खा केन्द्रों की स्थापना हुई थी। विद्यार्थी जी आश्रम को एक आदर्श व आत्मनिर्भर केन्द्र बनाना चाहते थे। एक समय तक सेवाश्रम ग्रामीण क्षेत्र का सर्वमान्य व सर्वोच्च स्थल बना रहा। 25 मार्च, 1931 को अचानक कानपुर दंगों में उनकी शहादत के बाद नरवल सेवाश्रम को उनके स्मारक का स्वरूप देने के लिए समिति गठित हुई। 1934 में जवाहरलाल नेहरू ने नरवल सेवाश्रम के भवन की नींव रखी। कस्तूरबा स्मारक निधि से 1942-43 में श्री शिव नारायण टण्डन की कोशिश से व 1959 में गांधी स्मारक निधि से मिले धन से भवनों का निर्माण हुआ। 1955-56 में प्रबन्ध समिति ने सोसायटी रजिस्ट्रेशन एक्ट में इसे पंजीकृत कराया, जिससे वह खादी उद्योग व अम्बर चर्खा केन्द्र बन गया। अफसोस कि आज यह ऐतिहासिक स्थल इन गतिविधियों का मात्र यादगार स्थल भर रह गया है।

हिन्दुस्तानी बिरादरी का गठन : भारत की बहुलतावादी संस्कृति को मानते हुए पूरी मनुष्य जाति के साथ बराबरी, आजादी और भाईचारे की भावना से ही मानवीय एकता मजबूत होगी, यह विचार जनता पर राज करने वाली राजनीति कभी अंगीकार नहीं कर सकती। अंग्रेजों ने भारतीय जनता को बाँटकर राज करने की नीति को हमेशा हथियार बनाया। उनकी यह साजिश आजादी के आन्दोलन के अधिकांश जन नायक अब तक समझ चुके थे। पहले विश्वयुद्ध के दौरान 'खिलाफत आन्दोलन', कांग्रेस के अलग-अलग दलों में 1916 के लखनऊ अधिवेशन में हुए एकीकरण व असहयोग आन्दोलन के स्थगित होने से देश की जनता में अंग्रेजों की साजिश से हिन्दू-मुस्लिम, हिन्दू-सिक्ख एकता कमजोर पड़ने लगी। 1927-28 के दंगों को साम्प्रदायिक रूप देने और उन्हें अंग्रेजों द्वारा तेज करने की नीतियाँ जोर पकड़ने लगीं। कानपुर को साम्प्रदायिकता की आग में झोंकने की साजिशें पहले से ही शुरू थीं। विद्यार्थी जी ने दोनों समुदायों (हिन्दू-मुस्लिम) के संयुक्त मजदूर संगठन बनाकर आपस में मतभेद पैदा करने की शासन की नीति का कड़ा विरोध किया और 'प्रताप' प्रेस में दोनों सम्प्रदायों के सभी प्रमुख नेताओं की मौजूदगी में 'अखिल भारतीय हिन्दुस्तानी बिरादनी' की स्थापना की। हिन्दुस्तानी बिरादरी के संस्थापक सभापति स्वयं विद्यार्थी जी मनोनीत हुए, जिसमें ख्वाजा अब्दुल सलाम, बालकृष्ण शर्मा 'नवीन', मुर्तजा हुसैन आबदी, नवल किशोर भरतिया व मुहम्मद मुजफ्फर साहब आदि शामिल थे। बाद में इसे देश और जनता का दुर्भाग्य ही कहा जायेगा कि स्वयं हिन्दुस्तानी बिरादरी के संस्थापक विद्यार्थी जी को 1931 के कानपुर के भीषण हिन्दू-मुस्लिम दंगें में दोनों की एकता की कोशिश में ही अपना बलिदान देना पड़ा। यद्यपि आजादी के बाद 1960 तक हिन्दुस्तानी बिरादरी को कानपुर में इस धारा के नागरिकों ने सक्रिय रखा। इसी से प्रेरणा लेकर भारत में 1969 के गांधी जन्म शताब्दी वर्ष में हुए साम्प्रदायिक दंगों के दौरान खान अब्दुल गफ्फार खाँ—सीमान्त गांधी की मौजूदगी में 'इंसानी बिरादरी' की स्थापना हुई थी, जिसके संस्थापक अध्यक्ष थे लोकनायक जयप्रकाश नारायण (जे. पी.)। 1990 के बाद के अयोध्या के मन्दिर-मस्जिद विवाद से बने साम्प्रदायिक उन्माद व दंगों के दौरान कानपुर-उन्नाव जिलों में 'इंसानी बिरादरी' को साथियों ने पुनर्जीवित किया, जो आज भी सक्रियता बनाये हैं।

विद्यार्थी जी की साहित्यिक-सांस्कृतिक सेवाएँ : साहित्य और संस्कृति केवल लेखन या रंगमंचीय गतिविधियों आदि की कार्यवाही भर नहीं है। विद्यार्थी जी इसे व्यक्ति से समाज तक को बदलने का कारगर माध्यम मानते थे। उन्होंने हिन्दी पत्रकारिता को सामाजिक-राजनीतिक चिन्तन के साथ साहित्य की तमाम विधाओं से सम्बद्ध किया। हिन्दी साहित्य की राष्ट्रीय धारा को प्रोत्साहित करने के साथ उन्होंने गद्य लेखन में साहित्यिक व्यंग्य, हास्य व ओज आदि रसों को पिरोया। उनके द्वारा 1926 में 'प्रभा' मासिक के सम्पादन में व्यंग्य-चित्रों का स्तरीय प्रकाशन हिन्दी में पहली बार प्रभावशाली बना। आचार्य महावीर प्रसाद द्विवेदी युग के हिन्दी साहित्य की समृद्धि में उनका योगदान हमेशा यादगार रहेगा। 'प्रताप' के माध्यम से स्वराज्य साहित्य के प्रकाशन, राष्ट्रभाषा के सवाल पर चिन्तन, हिन्दी को राष्ट्रभाषा बनाने का भरसक प्रयत्न, हिन्दी गद्य को विचार व ओज सम्पन्न करने, कविता के साथ दृश्य साहित्य-नाटक के विकास के साथ 'घासलेटी' साहित्य के विरोध, विश्व साहित्य की महान कृतियों का अनुवाद-कर्म, क्रान्तिकारी साहित्य के प्रकाशन आदि के क्षेत्र में विद्यार्थी जी ने यादगार काम किये। विद्यार्थी जी ने हिन्दी पत्रकारिता को तो नयी दिशा दी ही, वह उदीयमान लेखकों को नयी विषयवार शैली और भाषा के प्रेरक भी बने। उनके इस योगदान के बारे में हिन्दी के महाप्राण कवि

'निराला' की 'मतवाला' में सम्पादकीय टिप्पणी देखिये—''**गणेश शंकर विद्यार्थी का व्यक्तित्व चुम्बकीय था। उन्होंने हिन्दी साहित्य की बहुत वृद्धि की। वह इन्हीं के साहस का फल था कि देशी राज्यों की प्रजा ने अपने उत्थान के लिए आवाज उठाना आरम्भ किया।**'' *('मतवाला' कलकत्ता, सम्पादक - सूर्यकान्त त्रिपाठी निराला)* इस तरह हिन्दी के परम उत्साही प्रवर्तक व गांधी की हिन्दुस्तानी हिन्दी के समर्थक विद्यार्थी जी ने हिन्दी साहित्य सम्मेलनों के आयोजन, नीति निर्धारण, भाषा-बोलियों व लिपि आदि पर स्पष्ट समझ के प्रवक्ता होने के कारण हिन्दी के श्रेष्ठ उन्नायकों में एक थे।

विद्यार्थी जी का आत्म बलिदान : बीसवीं शताब्दी का तीसरा-चौथा दशक जैसे-जैसे 'स्वराज्य' से 'पूर्ण स्वराज्य' के आन्दोलन की ओर बढ़ रहा था, देश-दुनिया की राजनीतिक स्थिति अत्यन्त कठिन व विस्फोटक होती जा रही थी। देश के भीतर अंग्रेज, आजादी के आन्दोलन को हर तरह से बाँटने-कुचलने और जनता पर अपना शिकंजा कसते जा रहे थे, अन्तर्राष्ट्रीय मामले में दूसरा विश्वयुद्ध 1945 में शुरू होने से वे देश को आजादी से दूर रखने की बराबर साजिश कर रहे थे। देश में एक ओर गांधी की अगुवाई में नमक कानून तोड़ने का उग्र आन्दोलन व सविनय अवज्ञा आन्दोलन जैसे-जैसे तेज हो रहा था, अंग्रेज सरकार का क्रूर दमन बढ़ रहा था। गांधी सहित कांग्रेस के सभी पहली पंक्ति के नेता गिरफ्तार कर लिये गये। सरकार सेनानियों को राजद्रोह के कड़े कानून के तहत जेलों में ठूँस रही थी। उधर 21 जनवरी, 1931 को जब सरकार ने कांग्रेस के सामने 19 जनवरी, 1931 को गोलमेज कान्फ्रेंस की संस्तुतियों पर विचार करने का प्रस्ताव रखा, कांग्रेस कार्यकारिणी ने उसे अस्वीकार कर दिया। मजबूरन 25 जनवरी, 1931 को वायसराय ने एकाएक गांधी को बिना किसी शर्त के जेल से रिहा कर दिया। इससे गांधी-इरविन समझौते (5 मार्च, 1931) का रास्ता साफ हुआ। सविनय अवज्ञा आन्दोलन स्थगित हुआ और सभी राजनीतिक बन्दियों को रिहा कर दिया गया। विद्यार्थी जी 10 मार्च, 1931 को हरदोई जेल से रिहा होकर कानपुर आये। यह उनकी पाँचवीं व अन्तिम जेल-यात्रा से रिहाई थी। अखिल भारतीय कांग्रेस का खुला अधिवेशन इसी महीने प्रस्तावित था, किन्तु वहाँ शामिल होने के बजाय होना कुछ और ही था।

मार्च 1931 में हो रही घटनाओं से देश विस्फोटक स्थिति में था। 27 फरवरी, 1931 को क्रान्तिकारी संगठन 'हिन्दुस्तान सोसलिस्ट रिपब्लिकन एसोसिएशन' के प्रमुख नेता व कमाण्डर चन्द्रशेखर 'आजाद' एल्फ्रेड पार्क, इलाहाबाद में पुलिस से घिर गये और उन्हें आत्म-बलिदान करना पड़ा। इसी दल के क्रान्तिकारी सरदार भगत सिंह, सुखदेव व राजगुरु तथा बटुकेश्वर दत्त को क्रमशः असेम्बली बम केस व लाहौर केस में बटुकेश्वर दत्त को आजन्म कारावास व शेष तीन को मृत्यु दण्ड की सजा दी गयी। 'गांधी-इरविन समझौते' के बावजूद सरकार क्रान्तिकारियों की सजा माफ करने के लिए तैयार नहीं हुई। इससे विद्यार्थी जी युक्त प्रान्त के कांग्रेस के अध्यक्ष के नाते खुद को असहाय महसूस कर रहे थे और क्रान्तिकारियों—विशेषकर भगत सिंह से कानपुर में बने व्यक्तिगत सम्बन्ध के कारण उनकी फाँसी के प्रति अत्यधिक भावुक थे।

23 मार्च, 1931 को जब नियत समय से पहले ही भगत सिंह, सुखदेव व राजगुरु को लाहौर की जेल में शाम के समय फाँसी दे दी गयी और उनका दाह-संस्कार भी कर दिया गया तो देशव्यापी हड़ताल शुरू हो गयी। जनता का गुस्सा सड़क पर आ गया। स्थिति सरकार के नियन्त्रण से बाहर हो गयी। कानपुर शहर में कांग्रेस कमेटी ने 24 मार्च को घटना के विरोध में हड़ताल का आवाहन किया। सरकार जो पहले से ही हिन्दू-मुस्लिम एकता को पूरी तरह तोड़ने की योजना बनाये बैठी थी, इस घटना से जनता का ध्यान हटाने के लिए दंगों का सहारा लिया। हुआ यह कि हड़ताल के आवाहन पर हिन्दू दुकानदारों ने तो स्वेच्छा से अपनी दुकानें बन्द कर दीं, पर कुछ मुस्लिम इलाकों में कांग्रेस कार्यकर्ताओं को बन्द को कामयाब बनाने पर जोर-जबरदस्ती करनी पड़ी। दोनों सम्प्रदायों में मन मुटाव 1927 के दंगों से चला आ रहा था, असामाजिक तत्त्वों ने इसका फायदा उठाया। स्थानीय अधिकारियों की निष्क्रियता व पुलिस की ढिलाई से हड़ताल में जनता का अनुशासन भंग हो गया और कानपुर दंगे की आग में जलने लगा। विद्यार्थी जी जो कांग्रेस के करांची अधिवेशन में आने की तैयारी में थे, कानपुर में अचानक दंगों के कारण उन्होंने वहाँ जाना स्थगित कर दिया। 25 मार्च को दिन के डेढ़ बजे जब दंगों की आग पूरे शहर में फैल गयी और शाम चार-पाँच बजे जब स्थिति भयानक मार-काट में बदल गयी, सुरक्षा बलों की कमी और सुस्ती से विद्यार्थी जी किसी की परवाह किये बिना घर से बाहर आ गये और दंगाई क्षेत्रों में अकेले ही घुस पड़े। एक प्रत्यक्षदर्शी माधो प्रसाद के आँखों देखे बयान के अनुसार मेस्टन रोड की मस्जिद के पास, नई सड़क पर आकर मण्डी व चौक से दोनों ओर से आ रही दंगाई भीड़ में विद्यार्थी जी घिर गये। भीड़ ने उन्हें चौबे गोला की गली में घसीटना शुरू किया। विद्यार्थी जी ने अपने बचाव में कहा कि वह भागेंगे नहीं। उन्मादी भीड़ में एक ने उनकी पीठ में छुरा भोंककर व दूसरे ने कुल्हाड़ी से वार करके उन्हें जमीन पर गिरा दिया। दंगा पीड़ितों को अब तक बचाने वाले एकमात्र विद्यार्थी जी इस हृदय विदारक घटना में अपना जीवन-दान दे चुके थे। इस समय उनके साथ कोई नहीं था। दो सिपाही और डिप्टी कलेक्टर उन्हें छोड़कर ड्यूटी से चले गये थे। बचे दो स्वयं सेवक उनसे पहले ही चौबे गोला पर मारे जा चुके थे।

उनके आत्म बलिदान की घटना 25 मार्च, 1931 को सायं चार-पाँच बजे के→

बापू का अध्यात्म

❑ रमेश थानवी

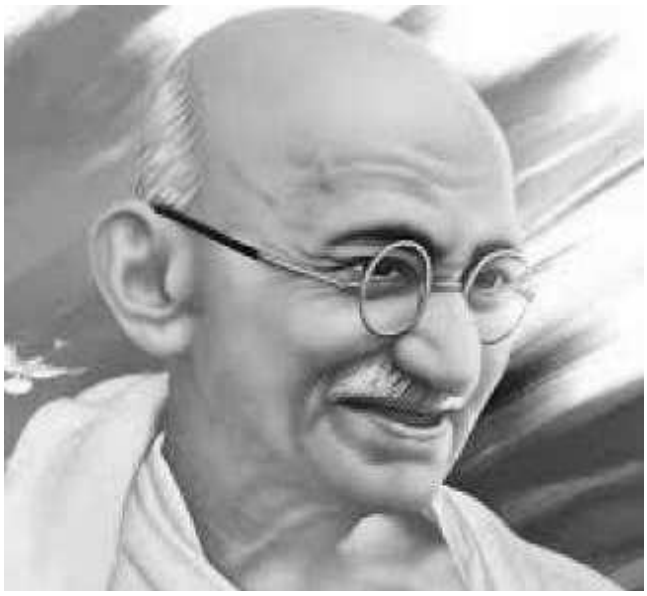

बापू महात्मा कहलाये। उनके नाम के आगे यह विशेषण अनायास ही नहीं जुड़ गया था। लोक-मानस ने उनका यही स्वरूप देखा था। लोक ने उनको इसी विशेषण से विभूषित करना आवश्यक समझा था।

लोक-मान्य होना किसी भी व्यक्ति के लिए बड़ा सम्मान होता है। असली सम्मान। राज-मान्य इसके विपरीत एक घटिया अवधारणा है। वे बाद में राष्ट्रपिता हो गये। राष्ट्रपिता का विशेषण भी उनको सुभाषचन्द्र बोस ने दिया था; मगर महात्मा के नाम से वे सदा जन-जीवन में आदरपूर्वक जाने जाते रहे।

बापू जो बैरिस्टर थे; विलायत में पढ़े थे और वकालत से अपनी रोटी कमाने की चाहत से दक्षिण अफ्रीका में जा बसे थे, उनका मन कभी अपने पेशे में रमा नहीं। वे प्रारंभ से ही किसी और मार्ग की तलाश में रहे। उनको तलाश रही किसी और तत्त्व की। वह तत्त्व अंतः उनको ईश्वर में ही दीखा। प्रारंभिक दिनों में उन्होंने कहा, *ईश्वर सत्य है,* गर अंतिम दिनों में वे इस निष्कर्ष पर पहुंच गये कि *सत्य ही ईश्वर है।*

यह निष्कर्ष सर्वथा वेद सम्मत था और बापू के अध्यात्म का आधार स्तम्भ था। एक प्रसिद्ध वैदिक उक्ति है—*सत्यान् नास्ति परोधर्मः।*

भारत आने पर उनको इस *सत्य* के दर्शन *लोक-जीवन* में हुए। इस लोक दर्शन को उन्होंने सबसे पहली प्राथमिकता समझा। वे सारे भारत की यात्रा पर निकल पड़े। *थर्ड क्लास* के डिब्बे में बैठकर। पूरे देश को आंखों में भर लेना और तमाम वे दुख जिनको लोक अर्थात भारत का जन-जन भोग रहा था; उन्हें आत्मसात कर लेना; यही उनका पहला सरोकार था। धीरेन्द्र मजूमदार इस लोक-गंगा की स्नान कहते थे। हालांकि धीरेन्द्र दा बापू से बहुत छोटे थे, लेकिन बहुत बाद में कही गयी उनकी बात अब हमारे साथ चलती है। इस लोक दर्शन अथवा लोक गंगा के स्नान ने बापू को भिंगो दिया था। सारे देश की आंखों देखी व्यथा-कथा को बापू ने दिल में उतार लिया। बापू को आजादी का रास्ता दीख गया। लोक बापू का अध्यात्म बन गया था। वे नयी शक्ति के साथ अपने रास्ते पर चल पड़े थे। निडर बनकर। लंबे-लंबे डग भरते चल पड़े थे। करोड़ों लोगों को अपने दिल में साथ लेकर।

ईश्वर कृष्ण की सांख्यकारिका कहती हे कि तीनों दुःखों के दर्शन से ही ज्ञान की जिज्ञासा जागती है :—

दुःख त्रय अभिघाताज् जिज्ञासा तद् अभिघातके हेतो। दृष्टे सा अपार्था चेन्न ऐकान्त अत्यन्त अतो अभावत्।।1।।

उधर बुद्ध भी कहते हैं कि सब कुछ दुःख है। समकालीन साहित्य में झांके तो अज्ञेय भी लिखते हैं कि *दुःख हमको मांजता है।* जनजीवन का यही दुःख बापू को जला रहा था। आज से ठीक एक सौ बरस पहले गुजराती कवि *न्हानालाल* ने एक गुजाती कविता में लिखा था :

वह तो सांसारिक साधु है;
गृहस्थ होकर भी
संन्यास धार बैठा है!
निरंतर दुःख को न्योता देता,
एशिया के उन महायोगीन्द्र ईसा का
वह अनुज है छोटा-सा।
पर पीड़ा देख प्रज्वलित होता

→बीच हुई। शाम घिर जाने और आधी रात तक उनके घर न लौटने पर लोगों को आशंका घेरने लगी। 26 मार्च को शहर में उनकी खोज जारी रही। 27 मार्च को खबर मिली कि अस्पताल में बहुत सी लाशें पड़ी थीं। शिव नारायण मिश्र व डॉ. जवाहरलाल रोहतगी ने खद्दर के कुर्ते व हाथ में 'गजेन्द्र' नाम गुदे होने से उनके विकृत शरीर की पहचान की। इस तरह कुल चालीस वर्ष पाँच माह के जीवन काल में विद्यार्थी जी ने मानवीय एकता के लिए आत्म बलिदान दिया।

विद्यार्थी जी की शहादत पर 1 अप्रैल, 1931 को 'प्रताप' के संयुक्त सम्पादक बालकृष्ण शर्मा 'नवीन' को तार से भेजे अपने पत्र में गांधी ने लिखा था, "**...यद्यपि कलेजा फट रहा है तो भी गणेश शंकर की इतनी शानदार मृत्यु के लिए शोक-सन्देश नहीं दूँगा। चाहे आज ऐसा न हो, परन्तु उनका पवित्र खून किसी दिन अवश्य हिन्दुओं और मुसलमानों को एक करेगा। इसलिए उनका परिवार शोक-सन्देश का नहीं, बधाई का पात्र है। इसकी मिसाल अनुकरणीय सिद्ध हो।**" *('गांधी वाङ्मय', खण्ड 45, पृ. 396)* ❑

महा वैष्णवों का वह वंशज है।
श्रीनगर का मानो नरसिंह मेहता।
हिय उसके होली सुलगे,
जलते अंगारों-से नेत्र,
मुख-मंडल पर विषाद-रेख।
देश की चिन्ता उसे जलाती,
सूखी जाती है देहलता।

एक मार्गदर्शक लोक-कवि के रूप में नरसी मेहता बापू के प्रेरणा पुरुष बन गये थे। उनको नरसी मेहता का यह भजन *वैष्णव जन तो तेने कहिए, जे पीर पराई जाणे रे*...रास आ गया। उनके मन को भा गया और वे इसी एक भजन में सार रूप में एक बड़े आध्यात्मिक सत्य को देखते रहे। नरसी इस भजन के साथ ही उनके संगी-साथी हो गये और नरसी का दूसरा एक भजन उनके मन को फिर भा गया, वह था—*एकज दे चिंनगारी महानळ...।* पहले भजन में बापू नरसी की करुणा से आप्लावित हुए थे और दूसरे भजन ने उनके मन में सत्य को अन्वेषित करने और पा लेने की चाहत को और प्रबल कर दिया। यहां गौर करने और समझने की बात यह है कि सत्य तक पहुंच कर उसे पा लेने की चाहत बड़ी बात थी। जानना और पा लेना दो अलग-अलग आवश्यकताएं हैं। नरसी जिस चिनगारी की मांग कर रहे थे वह चिनगारी उसी अग्नि-तत्त्व का नाम था, जिसे कठोपनिषद् में यमराज ने नचिकेता-अग्नि का नाम दिया। यह वही सत्य था, जिसकी बापू को तलाश थी और इस सत्य के सार्वलौकिक होने में, सार्वभौमिक होने में और सार्वकालिक होने में कोई संदेह नहीं था।

कठोपनिषद् कहता है :—
एकस्तथा सर्वभूतन्तरात्मा
रूपं रूपं प्रतिरूपो बहिश्च।।9।।
(अध्याय 2, वल्ली-2)

एक तरफ नरसी की करुणा थी और दूसरी तरफ सत्य की चाहत थी। जिसे बापू ईश्वर के रूप में ही देखते रहे जीवन भर। यहां हम देखते हैं कि बापू का अध्यात्म लोक में बसता था। वे जैसे नरसी के निकट गये थे वैसे ही वे कबीर के करीब थे। उतने ही वे नानक के साथ थे। *लोक में बापू का राम रमता था और जीवन के हर स्पंदन में उन्हें ही उसी ईश्वर का दर्शन होता था, जिसे वे सच मानते थे।* अंतिम सत्य के रूप में स्वीकार करते थे। लोक में कुदरत भी साथ थी और करीम भी साथ था। बापू के लिए कुदरत का जर्रा, जर्रा बेशकीमती था और यह कहूं कि वह ईश्वर का ही पर्याय था, तो भी अतिशयोक्ति नहीं होगी।

वे कहते थे कि मेरे हर श्वास में, प्रश्वास में राम नाम का जाप चलता रहता है। वे राम नाम को सबसे बड़ी दवा मानते थे और बताते थे कि यही राम नाम राम-बाण दवा है। उन्होंने एक पुस्तक लिखी, जिसका नाम ही राम-नाम है। इस पुस्तक में राम नाम की महिमा वैसे ही गायी गयी है, जैसे कोई इन दो शब्दों का पूरा भाष्य कर रहा हो।

अब यहां हम देखते हैं कि बापू के जीवन में अध्यात्म ने लोक-मार्ग से प्रवेश किया था और वे उसी लोक के लिए काम करते हुए अपने अध्यात्म को जीवन भर सींचते रहे। यह विलक्षण महात्मा ईश्वर को पाने के लिए जंगल में नहीं गया, इस महात्मा ने ईश्वर को पाने के लिए जंगल में नहीं गया, इस महात्मा ने ईश्वर को पारलौकिक सत्ता नहीं माना बल्कि लोक से विचरता हुआ यह एक पारलौकिक सत्य को देखता रहा। करुणा के बिना, प्रेम के बिना, पर-पीड़ा को पूरी संवेदना के साथ समझे बिना उनको अपना ही जीवन व्यर्थ लगता था। यह पर-पीड़ा और करुणा उनकी लोक के प्रति आस्था से उपजी थी। उनका धर्म लोक में था, परलोक में नहीं। वे कुटिया में बैठकर साधना करने नहीं गये थे। मगर *'परहित सरिस धरम नहीं भाई'* को समझते हुए, *'रघुपति राघव राजा राम'* को गाते हुए ईश्वर तत्त्व के दर्शन कर चुके थे।

वे भी कबीर के साथ थे जब कबीर ने पूछा था—दुई जगदीश कहां ते आया? उनके लिए सारे धर्म, संप्रदाय एवं पंथ एक ही थे। अर्जुन की तरह उनका भी मोह नष्ट हो गया, उनको भी अपनी मूल-सत्ता (स्मृति) मिल गयी थी और वे भी आध्यात्मिक स्तर पर वहां पहुंच गये थे कि कह सकें *स्थितिऽस्मि।* बापू ऐसे ही अपने में स्थित थे। इस स्थिति ने उनको दृढ़ता दी थी, ऐसी कि उद्घोष कर सके—*अंग्रेजों भारत छोड़ो-क्विट इंडिया।*

इस दृढ़ता की तथा ऐसी प्रतिबद्धता की कुछ तस्वीरें तो देख लीजिए। पहली तस्वीर है कि उन्होंने जहां साबरमती आश्रम बसाया, वहां जंगल था और उस जंगल में सांप बहुत रहते थे। आश्रम बसाने का काम जब शुरू हुआ तो बापू ने अपने सभी संगी साथियों से कहा, यहां सांप हमारे मेजबान हैं और अच्छा मेहमान कभी अपने मेजबान को तकलीफ नहीं देता। उन्होंने हिदायत दी थी कि कोई भी सांप को मारेगा नहीं। बल्कि एक रस्सी के फंदे में बांधकर उनको थोड़ा दूर छोड़ आयेगा ताकि वे अपने लिए नई जगह चुन लें। उस आश्रम में जब रात को सांप निकलते तो पहरा देने वाले उनके संगी साथी यही काम करते थे कि सांप को एक फंदा पहनाकर बांधकर बाहर छोड़ आते थे, और जिंदा छोड़ आते थे। यह जानकारी मुझे उनके अत्यन्त आत्मीय सहयोगी *काशीनाथ त्रिवेदी* से मिली, जो साबरमती के प्रारंभिक दिनों में यह काम कर चुके थे और जिनके साथ रहने का मुझे बार-बार अवसर मिला।

दूसरी तस्वीर देखिए—*बाबा बलवंत सिंह* शौच फिरने जंगल में गये थे और जंगल से लौटते समय लगभग पांच सेर माटी का एक ढेला उठा लाये और आश्रम में जहां मिट्टी से हाथ धोये जाते थे, उसी स्थान पर रख दिया। बापू उधर से गुजरे तो उनको वह माटी का ढेला दीख गया और उन्होंने तुरंत ही जानकारी चाही कि माटी का यह ढेला खेतों से कौन लेकर आ गया है। उनके

सामने कोई झूठ नहीं बोल सकता था; यह उनके व्यक्तित्व का करिश्मा था और उनकी तालीम थी। बलवंत सिंह जी स्वयं चले आये और उन्होंने कहा बापू यह भूल मुझसे हुई है। बापू ने कहा कि तुम इस माटी के ढेले को उसी खेत में फेंक कर आओ जिस खेत से लाये हो। तुम्हें मुट्ठी भर माटी चाहिए थी तुम पांच सेर क्यों उठा लाये? यह अपरिग्रह का व्रत तुमसे कैसे भंग हुआ। भरी दुपहरी में *बाबा बलवंत सिंह* उसी खेत में गये और वह माटी का ढेला ससम्मान क्षमा याचना के साथ उसी खेत में रख आये। यह तथ्य मुझे *बाबा बलवंत सिंह* की पुस्तक *बापू की छाया में* से मिला है।

तीसरी तस्वीर देखिये—की बापू पत्र लिख रहे थे। पास में से मीरा बहन गुजरी तो बापू ने कहा *मीरा दो पत्ती नीम की तोड़ लाओ।* बापू पत्र लिखते गये और मीरा एक डाली तोड़कर बापू के पास रखकर चली गयी। वे जो भी काम करते थे ऐसी तल्लीनता से करते थे कि उन्हें आसपास दूसरा कुछ दीखता नहीं था। पत्र लिखने का काम खत्म हुआ तो देखा की मीरा एक टहनी तोड़ कर रखी गयी है। मीरा को बुलाया गया और फिर पूछा, मीरा मैंने तो दो ही पत्ती मांगी थी तू ये पूरी टहनी तोड़कर क्यों ले आयी। तुझसे यदि अपरिग्रह का व्रत भंग हुआ है तो यह मेरा ही पाप है। मीरा बहन सकते में थी, काटो तो खून नहीं मगर बापू को इतने भर से संतोष नहीं हुआ। शाम की प्रार्थना सभा में एक घोषणा कर दी गयी कि मीरा से अपरिग्रह का व्रत भंग हुआ है, इसलिए मैं कल उपवास करूंगा और मौन भी रखूंगा। मीरा के लिए इससे बड़ी सजा कोई नहीं हो सकती थी। लेकिन यह बापू की तालीम का तरीका था। वे अपने सहयोगियों को ऐसे ही तप से गुजारते थे, कुंदर बनाते थे और अध्यात्म से सींचते थे। कोई *मीरा बहन* की डायरी और उनकी अनुपम पुस्तक *द स्पिरिट्स पिलग्रिमेज* पढ़े तो ऐसी कई छवियां मिल सकती हैं।

उक्त तीनों तस्वीरें बताती हैं कि बापू

कितने करुणावान थे। जर्रे-जर्रे में ईश्वर के वास के प्रति कितने सजग थे और कुदरत के कितने करीब रहकर सच्चे पर्यावरण प्रेमी हो गये थे। चाहे माटी हो, चाहे सांप हो, चाहे नीम की दो पत्ती हो बापू के लिए इन सबके प्रति समान प्रेम था। और यह वही प्रेम था, जिस प्रेम से परमात्मा प्रकट हुआ करता था। तुलसी ने कहा है—*हरि व्यापक, सर्वत्र समाना, प्रेम तैं प्रकट होहिं मैं जाना।*

आज कोई ऐसा राजनेता पूरी दुनिया में कहीं नहीं दिखायी देगा जो आश्रम में रहता हो और देश की आजादी के आंदोलन की व्यूह रचना करता हो और फिर भी जिसके आश्रम में सेवेरे व शाम बिना नागा प्रार्थना सभाएं होती हो!!! बापू की प्रार्थना सभाएं सर्वधर्म प्रार्थना सभाएं होती थीं। कुरान भी था उनमें, गीता भी थी और सबसे पहले तो *ईशावास्य उपनिषद्* था। वहां गाया जाने वाला हर भजन पूरी उदारता के साथ सब धर्मों को समान दृष्टि से देखता था मगर मानवता उन सबसे ऊंचे स्थान पर रखता था। भारत में *महामुनि वेदव्यास* ने कहा था :

गुह्यं ब्रह्म तदिदं ब्रवीमी।
नहि मानुषाच्छ्रेष्तरं हि किंचित।

बापू भी यही कहते थे। बापू के यहां आदमी बड़ा भी था और बराबर भी। न जाति भेद, न भाषा भेद और न रंग भेद। उनकी प्रार्थना-सभाओं में *रैदास* भी गाये जाते थे। जिनका प्रसिद्ध भजन है :

जब राम नाम कही गावेगा।
तब भेद अभेद मिटावेगा।।

यह सर्वधर्म समानत्व बापू का अध्यात्म था। मानवता की सर्वोच्च स्थापना भी बापू का अध्यात्म था। वेद कहते हैं कि *प्रजापति की सृष्टि में मनुष्य प्रजापति के निकटतम* है। बापू भी यही कहते थे।

एक पुस्तक है जो खुद बापू ने लिखी है—*हिन्दू धर्म क्या है?* यह पुस्तक नेशनल बुक ट्रस्ट से छपी है। इसमें बापू उल्लेख करते हैं कि *ईशावास्य उपनिषद्* का पहला श्लोक पूरी मानवता को हर संकट से उबारने के लिए काफी है। पहला श्लोक ही नहीं पहले श्लोक की पहली पंक्ति ही काफी है। उन्होंने लिखा है कि कभी जलजला आ जाये। और पूरी दुनिया उसमें डूब जाये अथवा कभी कोई बड़ा अग्नि कांड हो जाये और उसमें सब कुछ जल जाये लेकिन *ईशावास्य उपनिषद्* के पहले श्लोक की पहली पंक्ति बच जाती है तो यह पूरी कायनात उठकर खड़ी हो जायेगी। *ईशावास्य उपनिषद्* का पहला श्लोक सभी जानते हैं :

ईशा वास्यमिद्मसर्वं यत्किंच जगत्यां जगत।
तेन त्येक्तेन भुञ्जीथा मा गृधः कस्यस्विद्धनम्।।1।।

बापू का अध्यात्म उनके गीता में प्रवेश से भी प्रारंभ होता है। बहुत रोक बात है कि गीता के दूसरे अध्याय के दो श्लोक उनको सबसे पहले आकर्षित करते हैं और वे इतने मोहित हो जाते हैं कि पूरी गीता खोजकर पढ़ लेने से पहले उनकी जिज्ञासा शांत नहीं हुई। वे दो श्लोक हैं :

ध्यायतो विषयान्पुंसः संगस्तेषूपजायते।
संगात्संजायते कामः कामात्क्रोधोऽभिजायते।।
।।2.62।।
क्रोधाद्भवति संमोहः संमोहात्स्मृतिविभ्रमः।
स्मृतिभ्रंशादबुद्धिनाशो बुद्धिनाशात्प्रणश्यति।।
।।2.63।।

यह तो प्रवेश मात्र था। वे फिर गीता का अध्ययन करते हैं और उसको मथ-मथ कर उसका सार रूप संकलित करते हैं और फिर गीता माता के नाम से पूरी पुस्तक लिख डालते हैं। गीता से कुल 42 श्लोक चुनते हैं और इन श्लोकों में वे पूरी गीता समाहित है, ऐसा सोचते हैं। गीता के जिस श्लोक की फिर वे पुरजोर पैरवी करते हैं, वह है :

उद्धरेदात्मनात्मानं नात्मानमवसादयेत् ।
आत्मैव ह्यात्मानो बन्धुरात्मैव रिपुरात्मनः।।
।।6.5।।

आत्मा से मनुष्य आत्मा का उद्धार करे, उसकी अधोगति न करे। आत्मा ही आत्मा का बंधु है और आत्मा ही आत्मा का शत्रु है।

गीता माता नाम की पुस्तक एक निधि के रूप में वे हमारे लिए छोड़ जाते हैं और ऐसा काम भी वे अपने आध्यात्मिक दुलार के वशीभूत होकर करते हैं कि कम से कम सुचिन्तित परिचय एवं सरलार्थ के साथ सारे लोगों को मिल सके। यहां मैं दुलार शब्द का प्रयोग इसलिए कर रहा हूं कि बापू अपने जीवन के हर पल और हर प्रयास में लोक-वत्सल थे। वात्सल्य कूट-कूट कर भरा था और उस वात्सल्य में भी वही प्रेम प्रकट होता था जो मैया यशोदा के मन में कभी रहा होगा अथवा कौशल्या के मन में जागा होगा।

बापू का अध्यात्म उनके जीवन में उतर गया था। अपने ही आचरण पर आधारित। न वहां पाखंड था और न वहां किसी तरह का मोह था। न कोई विकार था। शुद्ध निर्मल हृदय से सबके प्रति समान भाव रखते हुए वे जैसा व्यवहार करना चाहते थे वैसा ही करते थे। उनके जीवन में आचरण करते हुए महात्मा ने अपने जीवन में अध्यात्म को उतारा था उसका पोषण किया था और उसे पुष्ट करते हुए सच्चे आध्यात्मिक जीवन के अर्थ वे संप्रेषित कर सके थे। वे एकादश मूल्य है :

अहिंसा, सत्य, अस्तेय, ब्रह्मचर्य, असंग्रह।
शरीरश्रम, अस्वाद, सर्वत्र भयवर्जनः।।
सर्वधर्म-समानत्व, स्वदेशी, स्पर्श भावना।
विनम्र व्रतनिष्ठा से ये एकादश सेव्य है।।

'माता कस्तूरबा स्मृति सम्मेलन' का आयोजन

आप जानते ही हैं कि 11 अप्रैल 2019 को माता कस्तूरबा के 150 वर्ष पूरे हो रहे हैं। इस अवसर पर 11 एवं 12 अप्रैल 2019 को पोरबंदर (गुजरात) में 'माता कस्तूरबा स्मृति सम्मेलन' आयोजित किया गया है। यह सम्मेलन 11 अप्रैल की सुबह 10.30 बजे शुरू होगा और 12 अप्रैल 2019 की दोपहर तक चलेगा।

उल्लेखनीय है कि गांधी परिवार के **श्रीमती तारा गांधी भट्टाचार्य** एवं **श्री तुषार गांधी** सम्मेलन में शामिल हो रहे हैं। इस आयोजन में आप सादर आमंत्रित हैं।

आप कब पहुंच रहे हैं, इसकी सूचना देने का कष्ट करेंगे।

सम्मेलन स्थल : *भावजी लवजी सैनेटोरियम, पोरबंदर रेलवे स्टेशन के सामने, पोरबंदर (गुजरात)।*

संपर्क : *श्रीमती नीता महादेव, मंत्री, गुजरात लोकसमिति, मोबाइल-9724082788, ई-मेल : nitamahadev57@gmail.com*

विशेष : 1. सभी प्रतिनिधियों से निवेदन है कि अपने साथ ओढ़ने-बिछाने के कपड़े एवं मच्छरदानी अवश्य लायें।
2. पोरबंदर में निवास की व्यवस्था 10 अप्रैल की शाम से 12 अप्रैल तक है। कृपया अपना कार्यक्रम इसी के अनुसार बनायें।

–शेख हुसैन,
महामंत्री, सर्व सेवा संघ

महात्माजी का जीवन अपने आप में एक संदेश था। सनातन संदेश। उनका अध्यात्म उनके अपने अध्ययन और अन्वेषण से पुष्ट हुआ था। वे निरंतर अध्ययन करते रहते थे और अपने समकालीन संतों से, विचारकों से एवं विद्वतजनों से चर्चा-परिचर्चा करते रहते थे। देश के हजारों विद्वत्जन उनके साथ जुड़ गये थे और अलग-अलग स्रोतों से उनको नयी-नयी रोशनी मिलती रहती थी।

अपनी जीवन को बापू *सत्य के साथ मेरे प्रयोग* कहते हैं। यह जीवनी उनके प्रारंभिक जीवन की कथा ही है। इसके बाद का उनका जीवन घोर संघर्षमय है। हर संघर्ष में सत्याग्रह उनका शस्त्र था। सत्याग्रह को समझाते हुए वे 'हिन्द स्वराज' में लिखते हैं-

''सत्याग्रह अपने अधिकारों को आत्म-उत्पीड़न के द्वारा प्राप्त करने का माध्यम है, यह शस्त्रों द्वारा विरोध का विलोम है। इसका उद्देश्य युद्धबल के उद्देश्य से बिलकुल उलटा है। अगर कोई काम मेरी आत्मा को अस्वीकार्य है, मैं उसे करने से इनकार कर दूं तो आत्मबल का इस्तेमाल करना सत्याग्रह है। अगर सरकार कोई ऐसा कानून बनाती है जो मुझ पर लागू होता है और मैं उसे पसंद नहीं करता। अगर मैं उसे निरस्त कराने के लिए हिंसा का प्रयोग करता हूं तो यह शरीर बल का प्रयोग होगा। मैं उस कानून को मानने से इनकार कर देता हूं तो मैं आत्मबल प्रयोग करता हूं यानी सत्याग्रह करता हूं। यही आत्मबलिदान है—आत्मोत्सर्ग उसका हिस्सा है। सब मानते हैं कि दूसरे के बलिदान से लाख गुना अच्छा आत्म-बलिदान है।''

अब यहां हम समझ सकते हैं कि महात्माजी के जीवन में अध्यात्म कैसे कूट-कूट कर भरा हुआ था। हम यह भी कह सकते हैं कि उनके जीवन का सारा ताना-बाना अध्यात्म से ही बुना हुआ था। जिसे आत्म-तत्त्व की पहचान होती है और जो आत्म-बल का उपयोग युद्ध बल के खिलाफ करते हुए आत्मोत्सर्ग करने को तैयार है वह भला अध्यात्म से कितना दूर हो सकता है? ❑

बा-बापू : 150वीं जयंती पर विशेष

'बा' भारत वापसी

❑ गिरिराज किशोर

गांधीजी को लेकर एक बड़ा और चर्चित उपन्यास प्रस्तुत कर चुके श्री गिरिराज किशोर ने अब बा पर कलम उठायी है। बा पर कुछ भी लिखना बहुत कठिन था। नहीं के बराबर जानकारियां। 'पहला गिरमिटिया' की सामग्री जुटाने में उन्हें कोई दो हजार पुस्तकों से मदद मिली थी। और 'बा' उपन्यास लिखते समय मुश्किल से दो पुस्तकें सामने थीं। वे उन सब लोगों से मिले, जिन्हें कस्तूरबा के बारे में थोड़ी-सी भी जानकारी थी और उन जगहों पर गये, जहां बा ने थोड़ा या बहुत समय बिताया था। इस तरह बनी यह कथा, यह इतिहास बा के अलावा खुद बापू के दो और रूपों को भी सामने रखता है–पति और पिता का रूप। प्रस्तुत है 'बा' का एक अंश, जो बा-बापू : 150 के अवसर पर क्रमशः प्रकाशित हो रहे हैं। –सं.

18 मार्च, 1922 को एक अप्रतयाशित घटना घटी। एक पुलिस की गाड़ी गांधी कुटी के सामने जाकर रुकी। पुलिस कप्तान ने उतरकर गांधीजी के पास जाकर नम्रतापूर्वक कहा, 'आपको गिरफ्तार किया जाता है।' बापू ने तैयार होकर आने के लिए पांच मिनट इंतजार करने के लिए कहा। वह बाहर जाकर खड़ा होकर प्रतीक्षा करने लगा। तब तक उनकी धोती, दो कम्बल,

सात किताबें इकट्ठी हो गयीं। दस-बारह अंतेवासियों के साथ कस्तूरबा ने प्रार्थना की। जब बापू गाड़ी में बैठकर चले तो वे स्वस्तिवाचन कर रहे थे, सबके लिए। अगले दिन सुबह कस्तूरबा ने प्रार्थना की, बापू के लिए बकरी का दूध, अंगूर और धुले हुए वस्त्र भिजवाये।

गांधीजी ने स्वयं अपने मुकदमे की पैरवी की। उस मुकदमे को उनके जीवनीकारों ने ग्रेट ट्रायल का नाम दिया है। जिस वाक-पटुता से उन्होंने बहस की थी, बड़े-बड़े वकील, देसी-विदेशी पत्रकार चकित रह गये थे। रॉलेट एक्ट के विरोध की सारी जिम्मेदारी उन्होंने अपने ऊपर ले ली थी। उनहोंने बेधड़क होकर स्वीकार किया था कि मैं जानता था कि मैं आग से खेल रहा हूं। जस्टिस ब्रूमफील्ड ने माना कि मि. गांधी ऊंचे आदर्शों वाले महान संत हैं। उनका काम सबसे मुश्किल और संघर्षशील है। इस भूमिका के साथ छह साल की सजा सुना दी। कस्तूरबा पूरे समय अदालत में बैठी रही। लोग गांधीजी की जय बोल रहे थे। कुछ के हाथों में फूल थे, कुछ आंखों में पानी...। बा बापू को ले जाए जाते हुए सूनी आंखों से निहार रही थी। सारे देश में बापू द्वारा अदालत में दी गई दलीलों की धूम थी। पहले कभी किसी कैदी ने इस तरह का बयान देने और पूरी जिम्मेदारी अपने ऊपर लेने की हिम्मत नहीं की थी। इस बात को कम लोग जानते हैं, बा ने उसी रात देशवासियों के नाम एक अपील लिखाई थी जो 23 मार्च, 1922 के यंग इंडिया में प्रकाशित हुई थी। उसमें लिखा था :

मेरे प्यारे भाइयो और बहनो,

मेरे पति को आज छह साल की सजा हो गयी है। मैं इस बात से मना नहीं कर सकती कि इस लंबी सजा का मेरे ऊपर असर पड़ा है। मैं यह सोचकर अपने को आश्वस्त कर सकती थी कि यह हमारे लिए मुश्किल नहीं है कि हम उनकी सजा खत्म होने से बहुत पहले, सरकार पर दबाव बनाकर, उसे कम करा सकते हैं। मुझे इसमें भी शक नहीं कि अगर देश जाग जाए और कांग्रेस के रचनात्मक कार्यक्रम को गंभीरता से ले तो बापू को ही मुक्त नहीं करा लेंगे बल्कि उन मुद्दों का हल भी हम अपनी मर्जी के अनुरूप पा लेंगे, जिनके लिए हम लड़ते रहे हैं और तकलीफें सहते रहे हैं। दवा हमारे हाथ में है। जो मर्द और औरतें मेरे लिए महसूस करते हैं, मेरे और मेरे पति के प्रति सम्मान रखते हैं, वे हृदय से कांग्रेस के रचनात्मक कार्यक्रम में जुट जाएं और उसे सफल बनायें। हमारी यह सफलता केवल जन साधारण की आर्थिक समस्याओं का समाधान ही नहीं करेगी, हमें अपनी राजनीतिक गुलामी से मुक्ति भी दिलायेगी। गांधीजी के विश्वास के प्रति भारत का पहला उत्तर यही होगा :

(अ) सब पुरुष और स्त्रियां विदेशी कपड़ों का परित्याग करें, खादी का इस्तेमाल करें, दूसरों को प्रेरित करें।

(आ) सब महिलाएं कातना और सूत बनाना अपना धर्म बना लें। दूसरों को भी उसके लिए प्रेरित करें।

(इ) सब व्यवसायी विदेशी सामान बेचना-खरीदना बंद कर दें। (अंग्रेजी से अनुदित)।

कस्तूरबा

1924 की बात है। 13 जनवरी को श्रीमती एम. के. गांधी के नाम तार आया। उस जमाने में तार का आना चिन्ता की बात

होती थी। तार कर्नल माडोका सर्जन जनरल सासून अस्पताल पुणे से आया था। लिखा था, 'पिछली रात मि. गांधी का एपेन्डीसाइटिस का ऑपरेशन हुआ, रात ठीक तरह गुजरी, आज सुबह से हालत भी संतोषजनक है।'

तार संक्षिप्त था। बा समझ गई कि कर्नल और अफसरान बापू की अप्रत्याशित बीमारी से डर गये, अगर उन्हें जेल में कुछ हो गया तो देश-भर में अशांति फैल जायेगी। इसलिए तुरंत निकटतम अस्पताल में ले गये। बापू जान गये थे कि उनका जीवन संकटमय है। इसीलिए उन्होंने पाश्चात्य दवाओं के विरुद्ध अपने पूर्वाग्रह को अलग रखकर सर्जरी और विलायती दवाओं के लिए अनुमति दे दी। बा का मन तड़प उठा। ऐसे समय में उसे बापू के पास होना चाहिए। लेकिन इतने कम नोटिस पर आश्रम छोड़कर जाना संभव नहीं था। जिम्मेदारी का सवाल था। अपनी जगह देवदास को रवाना कर दिया। पूरे देश से संदेश, तार और उपहार आ रहे थे। मरीज के स्वास्थ्य सुधार की गति धीमी थी। ब्रिटिश अधिकारियों की बेचैनी बढ़ रही थी। पता नहीं कब क्या हो जाए? 5 फरवरी को सरकार ने अचानक घोषणा की कि मि. गांधी को, बिना किसी शर्त, तात्कालिक प्रभाव से रिहा किया जाता है। बा खुश तो क्या होती पर चिन्तामुक्त अवश्य हो गयी। वह जान रही थी कि उनका कोई पारसी मित्र, कुछ समय के लिए, अपने जुहू के बंगले में, शांत जगह ले गया है तो बा को बहुत राहत हुई। लेकिन वहां की शांति बापू के प्रशंसकों ने कोलाहल में बदल दी। वे उनके छूटने का उत्सव मना रहे थे।

जैसे ही बापू के शरीर में कुछ ताकत आई, वे साबरमती आश्रम लौट आये। वहां आकर आश्रम के कामों में उलझ गये। बा को उनके फीनिक्स आश्रम वाली व्यस्तता याद आ गयी।

बापू के समाचार-पत्रों में यद्यपि बा का लेखकीय या किसी और तरह का योगदान नहीं था, पर कारगुजारियों की रपट अखबारों में मौजूद रहती थी। कभी-कभी पाठकों में भी चर्चा का विषय बन जाती थी। ज्यादा चर्चा आश्रम के लोगों के संकट के समय समाधान निकालने के बारे में बा के योगदान को लेकर होती थी। एक बार आश्रम का एक बछड़ा गंभीर रूप से बीमार हो गया था। उसका निदान सुझाया गया कि उसे जहर की सुई लगाकर कष्टमुक्त कर दिया जाये। बा ने उस निरीह जानवर को इस तरह कष्टमुक्त कर देने के विचार को अस्वीकार कर दिया। उसे अपनी देखरेख में रखकर इलाज करने की कोशिश की। लेकिन बाद में जब उसे बहुत तड़पते हुए देखा तो अपनी सहमति दे दी। हिन्दू धर्म की मान्यताओं के अनुसार गोवंश की रक्षा करना हर हिन्दू का धर्म है। अतः पाठकों की प्रतिक्रियाएं अवश्यंभावी थीं। पर बा को उस अनबोल प्राणी को यंत्रणा-मुक्त करने से संतोष मिला था। बा से पूछा गया तो जवाब दिया, मर्णांतक पीड़ा को देखते रहना हिंसा है और पीड़ामुक्त करना अहिंसा है। बापू से पूछा गए तो वे चुप रहे।

1926 में मणिलाल एक लड़की से प्रेम करने लगा था। दोनों परिवारों के बीच आना-जाना था। लड़की मुस्लिम थी। मणिलाल ने विवाह की अनुमति के लिए रामदास के माध्यम से पत्र भेजा। क्योंकि दोनों परिवार एक-दूसरे के निकट थे, लड़की का पत्र भी बापू के पास पहुंच गया था। लड़की का नाम फातिमा था। बापू ने मणिलाल को लिखा :

प्रिय मणिलाल,

रामदास के माध्यम से भेजा तुम्हारा पत्र पढ़ा। फातिमा का पत्र भी पढ़ा।...तुम हिन्दू धर्म मानते हो और फातिमा इस्लाम...तुम्हारी शादी की इच्छा तुम्हारे धर्म के विरुद्ध है। यह एक म्यान में दो तलवारें रखने की तरह होगा। तुम्हारे बच्चे किस धर्म को मानेंगे? उन पर किस धर्म का प्रभाव होगा? अगर फातिमा अपना धर्म छोड़ती है तो वह अपने धर्म के साथ अन्याय करेगी...क्या तुम दोनों ने अपने-अपने धर्म में विश्वास करना छोड़ दिया है?

तुम लोगों की शादी दोनों दोनों धर्मों को झटका होगी। यह समस्या अंतरर्जातीय विवाह से नहीं सुलझ सकती। तुम्हारे लिए यह भूलना मुश्किल है कि तुम मेरे बेटे हो। अगर तुम दोनों शादी कर लेते हो तो क्या अपने-अपने लोगों की सेवा कर पाओगे? मेरे विचार से तुम इंडियन ओपिनियन में काम करने के अयोग्य हो जाओगे।

मैं बा की सहमति नहीं ले सकता, वह कभी तैयार नहीं होगी। उसका पूरा जीवन दुखमय हो जायेगा। मेरी हिम्मत नहीं कि उससे कहूं। ईश्वर तुम्हें सही मार्ग दिखाए। बापू के आशीष।

बापू ने ऐसा क्यों किया, क्या बा के लिए? बा का जीवन इस घटना से दुखमय न हो। बा अपने बच्चों से जितना प्यार करती थी उसे देखकर लगता है कि यह बात बा से कभी कही होगी। धर्मों का भेदभाव बीच में आ रहा था?

बा ने पहले से ही तय कर लिया था कि मशरूवाला नानाभाई की तीन सुंदर बेटियों में से कोई एक मणिलाल के लिए ठीक रहेगी। मशरूवाला रुई का व्यापार करते थे। एक जमाने में उनका परिवार समृद्ध परिवारों में था। मशरूवाला और उनकी पत्नी विजय लक्ष्मी, गांधीजी के प्रभाव में, भौतिक सुख-सुविधाओं से संन्यास ले चुके थे। अपना जीवन और धन-धान्य जन-सेवा को समर्पित कर चुके थे। अकोला में उनका घर आश्रमवासियों के लिए खुला रहता था। अकोला से गुजरते हुए बा वहां रुक चुकी थी। तभी बा ने उन तीनों लड़कियों को देखा था। स्वाभाविक रूप से बा उनके संपर्क में भी आयी थीं।

...क्रमशः अगले अंक में

नये संकल्पों के साथ सर्व सेवा संघ का 87वां अधिवेशन रायपुर में संपन्न

सर्व सेवा संघ (अ. भा. सर्वोदय मंडल) का 87वां अधिवेशन छत्तीसगढ़ की राजधानी रायपुर में दांडी सत्याग्रह दिवस के अवसर पर 12 एवं 13 मार्च, 2019 को **श्री महादेव विद्रोही** की अध्यक्षता में संपन्न हुआ। अधिवेशन का उद्घाटन डॉ. एसएन सुब्बराव ने किया। छत्तीसगढ़ विधानसभा के अध्यक्ष डॉ. चरण दास महंत मुख्य अतिथि थे।

अधिवेशन के दो मुख्य विषय थे—1. आमजन से छिनता जा रहा जल-जंगल और जमीन तथा 2. माता कस्तूरबा एवं राष्ट्रपिता महात्मा गांधी की 150वीं जयंती वर्ष की चुनौतियां।

जल-जंगल और जमीन पर सर्व सेवा संघ प्रकाशन समिति के संयोजक श्री अरविन्द अंजुम ने तथा छत्तीसगढ़ से वरिष्ठ सामाजिक कार्यकर्ता श्री गौतम बंद्योपाध्याय ने विषय प्रवेश किया। चर्चा के बाद निम्न प्रस्ताव पारित किये गये :

"13 फरवरी, 2019 को सुप्रीम कोर्ट के न्यायमूर्ति अरुण मिश्र, नवीन सिन्हा व इंदिरा बनर्जी खंडपीठ के द्वारा वाइल्ड लाइ ट्रस्ट ऑफ इंडिया बनाम पर्यावरण मंत्रालय से संबंधित सिविल याचिका क्र. 109/2008 पर फैसला सुनाते हुए वन क्षेत्र में रहने वाले 11 लाख 80 हजार आदिवासियों एवं परंपरागत वन निवासियों को अतिक्रमणकारी घोषित करते हुए उन्हें बेदखल करने का आदेश जारी किया। यह आदेश न्याय के बुनियादी सिद्धांत यानी प्राकृतिक न्याय, मानव अधिकारों और संविधान प्रदत्त मानवीय गरिमा के साथ जीने के मौलिक अधिकारों के ऊपर हमला है। वास्तव में यह फैसला सरकार एवं कॉरपोरेट हित घटकों, वन विभाग, खनन कंपनियों, पर्यटन एवं होटल व्यवसायियों के बीच जुगलबंदी का परिणाम है। यही वजह है कि इस मुकदमे को सरकार ने हल्के से लिया। *न तो इसमें ठीक से पैरवी की गई और न ही फैसले के दिन सरकार की ओर से कोई वकील न्यायालय में उपस्थित हुआ।*

वनाधिकार कानून 2006 की प्रस्तावना में इस कानून की आवश्यकता का जिक्र करते हुए कहा गया था कि यह कानून आदिवासियों के साथ हुए *'ऐतिहासिक अन्याय'* को दूर करने के लिए बनाया जा रहा है। यह अन्याय औपनिवेशिक काल अर्थात् विगत 200 वर्षों से जारी है। इस कानून के तहत दिसंबर 2005 तक वन भूमि पर रहने वालों या खेती करने वालों आदिवासियों तथा 3 पीढ़ियों से रहने वाले परंपरागत वन निवासियों को पट्टा देना था। इस प्रक्रिया को संपन्न करने के लिए स्थापित प्रक्रियाओं के अधीन आवेदन करना था, जिसे एक समिति द्वारा जांच-परख कर स्वीकृत या अस्वीकृत किया जाना था, परंतु आधे से अधिक आवेदनों को मनमाने तरीके से खारिज कर दिया गया। जिसके विरुद्ध आदिवासी जमात संगठित हुई तथा इससे संबंधित कई मामले विभिन्न न्यायालयों में विचाराधीन है। परंतु वादी ने न्यायालय में खारिज कर दिये गये आवेदनों को आधार बनाकर एकतरफा तथ्य प्रस्तुत कर न्यायालय को गुमराह किया तथा सरकार आंखें बंद कर तमाशा देखती रही।

इस फैसले के आते ही आदिवासियों का गुस्सा दावानल की तरह भड़क उठा। आक्रोश की आंच से केन्द्र सरकार की नींद उड़ गई और आनन-फानन में 27 फरवरी, 2019 को आदिवासी कल्याण मंत्रालय, छत्तीसगढ़ सरकार आदि की ओर से पूर्व निर्णय को स्थगित करते हुए राज्य सरकारों से सत्यापन, पुनर्सत्यापन या समीक्षा की प्रक्रिया को चार माह के अंदर पूरा कर अदालत में 12 जुलाई, 2019 तक रिपोर्ट पेश करने को कहा है। साथ ही फॉरेस्ट सर्वे ऑफ इंडिया द्वारा अतिक्रमण की स्थितियों का वास्तविक आकलन हेतु सेटेलाइट तस्वीरें लेने को कहा है। इस तरह एक बार फिर केन्द्र सरकार द्वारा आदिवासियों एवं किसानों को बेदखल करने का प्रयास विफल हो गया।

इसी प्रकार वर्तमान केन्द्र सरकार ने 31 दिसंबर, 2014 को भूमि अधिग्रहण कानून 2013 में एक अध्यादेश लाकर जनपक्षीय प्रावधानों को निरस्त करने का प्रयास किया था, जिसे जनसंगठनों, आदिवासी संगठनों एवं किसान संगठनों के एकताबद्ध प्रयास ने विफल बना दिया था।

सर्व सेवा संघ का यह अधिवेशन जन हक की हिफाजत के सभी प्रयासों के साथ अपनी एकजुटता व प्रतिबद्धता प्रकट करता है।

यदि कानून अनुमति देता है तो सर्व सेवा संघ भी सुप्रीम कोर्ट में एक पक्ष बनेगा। हम इस विषय पर दिल्ली में एक राष्ट्रीय संगोष्ठी भी आयोजित करेंगे, जिसमें सभी पक्षों को बुलाया जायेगा। अधिवेशन में सुप्रीम कोर्ट से भी अपील की है कि स्थगन की अवधि 31 जुलाई से बढ़ाकर इस वाद के फैसला होने तक किया जाय।

गांधी को गोली : अधिवेशन में 30 जनवरी को उत्तर प्रदेश के अलीगढ़ में हिन्दू महासभा द्वारा गांधी की तस्वीर में गोली मारी गई एवं खून बहाया गया। यह वही हिन्दू महासभा है, जिसने मेरठ का नाम बदलकर 'गोडसे नगर' करने की मांग की है। इस विषय पर राज्य एवं केन्द्र सरकार का मौन यह उसकी स्वीकृति का परिचायक है। सर्व सेवा संघ इसकी भर्त्सना करता है।

हम मानते हैं गांधी का नश्वर शरीर भले ही हमारे बीच नहीं है, पर उनका विचार शाश्वत है। बापू के विचार क्रांतिकारी हैं, अतः युगों-युगों तक यह मानवता का पथ-प्रदर्शन करते रहेंगे।

अधिवेशन का समापन छत्तीस के मुख्यमंत्री **श्री भूपेश बघेल** के करकमलों से हुआ। इनका परिवार सर्वोदय से जुड़ा रहा है। जब 1969 में सर्वोदय का सम्मेलन राजगीर (बिहार) में हुआ था, उसमें आपने भाग लिया था।

सर्व सेवा संघ (अ. भा. सर्वोदय मंडल) गांधी विचार का राष्ट्रीय संगठन है। इसकी स्थापना मार्च 1948 में देशरत्न डॉ. राजेन्द्र प्रसाद की अध्यक्षता में सेवाग्राम में हुए राष्ट्रीय सम्मेलन में हुई थी। इस सम्मेलन में पंडित जवाहरलाल नेहरू, मौलाना अबुल कलाम आजाद, डॉ. जे. सी. कुमारप्पा, डॉ. जाकिर हुसैन, आचार्य विनोबा भावे, जयप्रकाश नारायण, आचार्य कृपलानी, संत तुकड़ोजी महाराज, काका कालेलकर, ठक्कर बापा, बालासाहेब खेर आदि राष्ट्रीय नेता उपस्थित थे।

–मारोति गावंडे,
कार्यालय मंत्री, सर्व सेवा संघ

जड़ें अपनी मिट्टी नहीं छोड़ती

❑ लीमा तूटी

लाखों आदिवासियों को अपने जंगल-जमीन से दूर करने के अमानुषिक फरमान के विरुद्ध एक आदिवासी कवियित्री लीमा तूटी के विद्रोही स्वर। –सं.

हमारे जंगल
जिसे हमारे पुरखों ने
सदियों से सहेजा और संभाला है
जहां के परिंदे और जानवर तक
समझते हैं
हमारी भाषाएं
वो जंगल
जिसने अकाल और
भूखमरी के दिनों में
हमें जिन्दा रखा है
और जिसकी गोद में
हमने बूना है, हजारों निर्दोष
सपनों का ताना-बाना
पर...अब...
वे कहते हैं
इसका मोह हमें
त्याग देना चाहिए
हमें अब अब छोड़ना ही पड़ेगा
अपना जंगल
अपने पुरखों का संजोया
सब कुछ
और किसी बड़े
महानगर के
किसी गंदे कोने को
बनाना होगा
अपना ठिकाना
वे चाहते हैं
भूल जायें आदिवासी
तीर-धनुष चलाना
भूल जायें
पलाश के रंग
चार और केऊंद
का स्वाद
भूल जायें पुटु
सुखरी ढूंढना
एक ही कांदा कोड़ना
और भूल जायें, हर वो कहानी
...जो सुन-सुनकर
वे बड़े हुए हैं
वे ये गौर करें
कि, शायद आप भी
भूल रहे हैं कि
'आदिवासी' होने का अर्थ
अर्थात्
जड़ें अपनी मिट्टी नहीं छोड़ती ❑

गौतम के. 'गट्स' की दो कविताएं

कृष्ण कहां-कहां पहुंचे?

हर क्षेत्र में होता गया का शोषण
सब जान के सोता प्रशासन
अपने दम पर कब तक रोके,
यहां अनगिनत हैं दुर्योधन,
कृष्ण कहां-कहां पहुंचे?
धर्म-स्थल के प्रांगण में भी,
चीर-हरण करती मन की आंखें,
लाज बचाये कैसे सबला,
यहां बहुत है दुर्योधन,
कृष्ण कहां-कहां पहुंचे?
फिल्मी दुनिया की छोड़ो बातें
खूब दिखाता मर्दानी लेडी,
यहां हर कोई रचता रंगीन रातें,
जब यहां पर मिल जाए दुर्योधन,
कृष्ण कहां-कहां पहुंचे?
मानव समाज का गिरता स्तर,
किन रिश्तों को कर दे कलंकित,
अपनो पर है अटूट विश्वास का बंधन,
लेकिन यहां कब बन जाए दुर्योधन,
कृष्ण कहां-कहां पहुंचे?

पर मत बांटो...!

रब ने बनाया इंसान,
सबके दिलों में है इमान,
ईशु, अल्ला, चाहे हो भगवान,
ये सब तेरे ही तो है नाम।
हर पल में है तू, हर कण में है तू
बाहर मत खोज बन्दे,
वो तो हर एक के मन में है।
बाहर मत खोज बंदे,
वो तो हर एक के मन में है।
अराधना कर या नमाज अदा कर,
या तू दुनिया की बनाई
हर रित कर, लेकिन पहले दीन-दुखी
असहाय से प्रीति कर।
सागर बांटा, पर्वत बांटा और
धरती को सरहद व टुकड़े में बांटी,
नहीं छोड़ा आसमान के फैलाव को,
पर मत बांटो इंसान को।
मंदिर बांटा, मस्जिद बांटी,
चर्च और गुरुद्वारे को बांटे,
पर इंसान को इंसान रहने दो
मत बांटो धर्म व जात-पात में।
'गट्स' कहे दुनिया वालों को,
खुशियां बांटो, गमों को बांटो,
नफरत मिटा के प्यार को,
पर मत बांटो इंसान को।
पर मत बांटो इंसान को।। ❑

सर्व सेवा संघ (स्वत्वाधिकारी) के लिए महामंत्री, शेख हुसैन द्वारा सर्व सेवा संघ परिसर, राजघाट, वाराणसी (उ.प्र.) 221001 से प्रकाशित तथा महावीर प्रेस, भेलूपुर, वाराणसी से मुद्रित। संपादक : अशोक मोती।